अल कुरआन वल महेदी

मोअल्लिफ़
मौलाना मुहम्मद अब्दुल हकीम 'तदबीर'

हिन्दी रूपांतर
शेख़ चाँद साजिद

• फ़ेहरिस्त •

नं.	उन्वानात	सफ़्हा नं.
1	अर्ज़े हाल	1
2	तआर्रुफ़ मोअल्लिफ़	3
3	दीबाचा	6
4	पहली आयते क़ुरआनी	13
5	दूसरी आयते क़ुरआनी	22
6	तीसरी आयते क़ुरआनी	31
7	चौथी आयते क़ुरआनी	37
8	पांचवी आयते क़ुरआनी	46
9	छठ्ठी आयते क़ुरआनी	56
10	सातवीं आयते क़ुरआनी	66
11	आठवीं आयते क़ुरआनी	77
12	हदीस अर् रायातुस्-सूद की तश्रीह	85
13	इमाम महेदी (अ.स.) का ज़ुहूर ख़िलाफ़त बनी अब्बास के ज़वाल के बाद	89
14	ख़ातिमा	104

بسم الله الرحمن الرحيم

अर्ज़े हाल

सारी तारीफ़ अल्लाह ही के लिए है-जो रब्बुल आलमीन है, और दुरूद व सलाम हो हुज़ूर ख़ातिमुल अम्बिया मुहम्मद मुस्तुफ़ा सल्ला० और ख़ातिमुल औलिया इमामुना महेदी मौऊद अले० और उन की संतान और अस्हाब पर।

दीन के प्रचार की हर दौर में ज़रूरत रही है और आज के माद्दा परस्ती के दौर में इस की अहमिय्यत पहले से ज़ियादा हो गई है। ख़ुसुसन् मुसलमानौं और मुस्लिम देशौ के दिन ब-दिन बिगड़ते हुवे हालात के पेशे नज़र दाफ़े हलाकते उम्मते मुहम्मदिया महेदी मौऊद अले० के आने का शिद्दत से इन्तिज़ार हो रहा है। हमारा ये एतिक़ाद है कि, महेदी मौऊद अले० आये और गये अब ईसा अले० की आमद का इन्तिज़ार है।

उम्मते मुस्लिमा सहमत है कि, महेदी अले० की बेअ्सत बर्हक़ है और ज़रूरियाते दीन से है, लेकिन शख़्सियत, वक़्त और मक़ाम के बारे में इख़्तिलाफ़ है। बाज़ मौज़ूअ् अहादीस और उन की तावीलात के कारण मुसलमान उलझन् में हैं। अब तो हदीस की किताबौं के नये एदिशन में महेदी अले० और उन के विषय में ज़िक्र की गई मुस्तनद अहादीस को हज़फ़ कर दिया जा रहा है, या शब्द और अर्थ को बदल दिया जा रहा है-जो ख़ुली बद-दियानती है।

बा’ज़ लोगौं का कहना है कि, अगर बेअ्सते महेदी अले० सच और ज़रूरी है, तो उस का ज़िक्र क़ुरआने मजीद में आना चाहिये था। इस

विषय पर मौलाना अब्दुल हकीम तदबीर रहे० ने अपनी पुस्तक “अल क़ुरआन वल महेदी” में तफ़्सील से बहस की है। इस के अलावा उन की एक आर पुस्तक “रिसाला बराहीने महेदविया” भी है, जो उर्दू और हिन्दी भाषा में प्रकाशित हो चुकी है। इस के अलावा हज़रत बंदगी मियाँ अब्दुल ग़फ़ूर सुजावंदी रहे० ने अपने “रिसाला हज़्दह आयात” में ऐसी अठारह (18) आयात को पेश किया है, जिन का तअ्ल्लुक़ हज़रत महेदी अले० और उन की क़ौम से है।

रिसाला “अल क़ुरआन वल महेदी” उर्दू भाषा में दो बार प्रकाशित हो चुका है और अब उर्दू से अपरिचित लोगौं के लिये हिन्दी में इस का रूपांतर पेश किया जा रहा है। हक़ीक़त को पहुंचाना हमारा काम है। लेकिन, तौफ़ीक़ और हिदायत अल्लाह तआला की मर्ज़ी पर मुन्हसर है। अल्लाग तआला से दुआ है कि, इस किताब को हिदायत का वसीला बनाये और जिन अस्हाब ने इस की तय्यारी में सहयोग दिया है, उन्हें अजरे अज़ीम अता फ़रमाये। आमीन...

तारीख़ :15/8/2023

शेख़ चांद साजिद

रूपांतरकर्ता

मौलवी मुहम्मद अब्दुल हकीम "तदबीर"

दक्कन में जिन क़ाबिले फ़ख़्र हस्तियौं ने जन्म लिया उन में "मौलवी मुहम्मद अब्दुल हकीम साहब तदबीर" भी हैं। २/शाबान, हिजरी १३०९ – मार्च १८९२ को हैदराबाद के एक क़दीम और मोअज़्ज़िज़ घराने में पैदा हूए। मद्रसा-ए-दारुल् उलूम् से मुन्शी आलिम और मौलवी फ़ाज़िल कामियाब किया। फ़िक्हा, तफ़्सीर वगैरा उलूमे इस्लामिया की तक्मील हज़रत बहरुल् उलूम् अल्लामा सैयद अशरफ़ शम्सी रहे० से की। शायरी में हज़रत सैयद जलालुद्दीन तौफ़ीक़ रहे० से मश्वरा-ए-सुख़न करते थे। बड़े अच्छे शायर थे। तबिअत में संजीदगी, निहायत कम सुख़न, मुख़्लिस और नेक नफ़्स बुज़ुर्ग थे।

मौलाना अब्दुल हकीम साहब तदबीर के दो (२) भाई-जनाब अबदुर् रहीम (मुदर्रिस) और जनाब अब्दुल करीम (सरकारी गुत्तेदार) थे। कहा जाता है कि, इम तीनों भाईयों के ख़ानदानी नामों को बदलकर ये नाम अल्लामा शम्सी रहे० ने ही रखे थे। तीनों भाईयों की बैअत हज़रत सैयद सादुल्लाह सैदन्जी मियां साहब रहे० अहले अकेली से थी। लेकिन, बाद इन्तिक़ाल तज्हीज़ व तक़्फ़ीन हज़रत सैयद अतन शहाब साहब महेदवी के हाथौं हूई, क्यूं कि मौलाना अब्दुल हकीम साहब के हज़रत मौलाना सैयद शहाबुद्दीन साहब से बहुत क़रीबी ताल्लुक़ात थे। अलबत्ता, बाक़ी दोनों भाई हज़रत मौलाना सैयद मुहम्मद मियां साहब अहले अकेली से ही वाबस्ता रहे। मौलाना अब्दुल हकीम साहब लावल्द थे। इसलिए हम ज़ुल्फ़ जनाब मुहम्मद मुनव्वर साहब के फ़रज़ंद मुहम्मद सालार अहमद को फ़रज़ंदे आगोशी बना लिया। हज़रत सैदन्जी मियां साहब अहले अकेली के ख़ादिम जनाब मुहम्मद जमाल साहब वल्द मुहम्मद सुल्तान साहब ताजिर-

जिन्हों ने हज़ीरा-ए-हज़रत बंदगीमियां सैयद राज मुहम्मद रहे० चंचलगूड़ा में १३२३ में मस्जिद तामीर करवाई थी, उन से रिश्तेदारी थी और उन्हीं के हड़वाड़ में दफ़न हैं। मौलाना अब्दुल हकीम साहब तदबीर ने ब-रोज़ जुम्आ, ९ शाबान, हिजरी-१३९३, ७ सप्टेम्बर-१९७३ को वफ़ात पाई।

मौलाना अब्दुल हकीम साहब मद्रसा-ए-गौशा महल में मुदर्रिस थे और हैदराबाद च सोशियल कालेज में उर्दू और फ़ारसी के लेक्चरर थे। इस के अलावा वोह सहीफ़ा मस्जिद के पीछे एक इदारा-ए-हमीदिया था- जिस में मुन्शी से मौलवी फ़ाज़िल तक तालीम होती थी, उस इदारे में भी दर्स दिया करते थे। जहां से कई नामवर उलमा फ़ारिग़ुल् तहसील (स्नातक) हूए। मौलाना अब्दुल हकीम साहब तदबीर से बहुत से अस्हाब ने इल्मी इस्तिफ़ादा किया। उन में से चंद नाम इस तरह हैं... हज़रत मौलाना सैयद नुसरत आलम मर्हूम, हज़रत मौलाना सेयद नुसरत अल् मुज्तहेदी साहब मर्हूम, हज़रत सेयद नुसरत रहे० अहले इप्पल गूड़ा, हज़रत सैयद अतन शहाब साहब मेहदवी, जनाब सैयद अब्दुल करीम यदुल्लाही मर्हूम अहले कड़पा, जनाब सैयद अब्दुल्लाह साहब (बिरादर हज़रत सैयद नुसरत आलम रहे०), मुहम्मद उमर ख़ां महमन् ज़ै (इदारा-ए- हमीदिया) जनाब मुहम्मद अब्बास अली खां डेप्युटी कलेक्टर, जनाब हकीम मुहम्मद अब्दुल वहाब ख़ां ख़ालिदी, जनाब मुहम्मद जमाल साहब “जमाल”, जनाब अब्दुलर् रहीम साहब “शफ़क़” जनाब अब्दुल गफ़ूर साहब मर्हूम ख़तीब मस्जिद अफ़्ज़ल गंज, जनाब क़ाज़ी अन्जुम आरिफ़ी साहब नाज़िरुल् क़ज़ाअत और उन के वालिद मोहतरम क़ाज़ी मीर लतीफ़ अली आरिफ़ अबूल् अलाई मर्हूम (साहिबे दीवान रियाज़े आरिफ़)

मौलाना अब्दुल हकीम साहब तदबीर ने दर्स व तदर्रीस के अलावा इल्मी ख़िदमात भी अंजाम दी हैं। १३७५ में इदारा-ए-शम्सिया से एक

माहनामा “मेहदवी” जारी हुवा था-जिस के ये नायब मुदीर थे। इस के अलावा हज़रत अल्लामा सैयद नुसरत अलयहिर् रहमा की तस्नीफ़ “कोह्लुल् जवाहिर” की तस्हीह व तरतीब में हाथ बटाया था और उस्ताद मोहतरम अल्लामा सैयद अशरफ शम्सी रहे० की अरबी तफ़्सीर “लवामउल् बयान” के पहले जुज़ का उर्दू में तर्जुमा किया। नीज़ मुकम्मल तफ़्सीर “लवामउल् बयान” और अल्लामा शम्सी रहे० के बा’ज़ दीगर तसानीफ़ को नक़्ल कर के एक दूसरा मख़्तूता तैयार किया।

अहमदनगर में एक मुख़ालिफ़ आलिम की रीशा दवानी की इत्तिला मिलने पर हैदराबाद से उलमा का एक वफ़्द अहमदनगर गया था। जिस में मौलाना “तदबीर” साहब भी शामिल थे। नीज़ क़ादियानियों से उन का एक मुबाहिसा भी हुवा था।

मौलाना तदबीर साहब की दो तसानीफ़ “रिसाला बताहीने महेदिवया” और “अल क़ुरआन वल महेदी” के अलावा तफ़्सीर “लवामउल् बयान” जुज़ अव्वल का तर्जुमा ज़ेवरे तिबाआत से आरास्ता हो चुके हैं। अव्वलुज़् ज़िक्र रिसाला में क़ुरआन व अहादीस के अलावा तारीख़ व जोग्राफ़िया की मदद से हज़रत सैयद मुहम्मद जौनपूरी के दाअ्वा-ए-महेदियत को साबित किता गया है और दूसरी तस्नीफ़ “अल क़ुरआन वल महेदी” में क़ुरआन मजीद की आठ आयतों से बहस करते हूए इमाम महेदी अलयहिस्सलाम की बेअ्सत का सुबूत पेश किया गया है। मौलाना की दीगर तसानीफ़ भी हैं, अगर ये तसानीफ़ और शायरी भी मन्ज़रे आम पर आ जाए, तो तालिबाने इल्म के लिए फ़ायदामंद साबित होंगी।

मुहम्मद उमर ख़ाँ महमन् ज़ै

रिसाला अल क़ुरआन वल महेदी

अक्सर मुसलमान अहादीसे महेदी अलयहिस्सलाम की बुन्याद पर वजूदे महेदी के क़ाइल है। उनको अगर बहस है तो सिर्फ़ तअय्युने शख़्सी में बहस है। उसके साथ बा'ज़ यह भी कहते हैं कि क़ुरआन शरीफ़ में महेदी (अ.स.) का नाम नहीं है और ना आपका कोई ज़िक्र है। उन लोगों के बरख़िलाफ़ बा'ज़ मुसलमान ऐसे भी हैं कि, महेदी से संबंधित अहादिस को नहीं मानते और क़ुरआन शरीफ़ में आपका नाम या ज़िक्र आने के भी क़ाइल नहीं। उनका कहना है कि महेदियत का मसला (विषय) सही होता तो क़ुरआन शरीफ़ में आपका नाम और ज़िक्र जरूर आता।

हक़ीक़त यही है की हदीस "रसूलुल्लाह (स.अ.व.) फ़रमाते हैं कि महेदी का नाम मेरे नाम से और महेदी के पिता का नाम मेरे पिता के नाम से मुवाफ़िक़ है" की बिना पर महेदी का नाम मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह है और शब्द 'महेदी' लक़ब है-जो रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का अता करदह है। इसी वजह से यह शब्द अहादीसे महेदी में जा-बजा आया है, लेकिन क़ुरआन शरीफ़ में कहीं भी लफ़्ज़ महेदी नहीं आया। इसी तरह नाम भी नहीं आया। अलबत्ता क़ुरआन शरीफ़ में आपका ज़िक्र इशारात और किनायात (संकेत) के साथ उसी तरह आया है-जिस तरह रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का ज़िक्र तौरात वग़ैरह में मौजूद और मज़्कूर है। मिसाल के तौर पर तौरात की एक आयत में इस बात का सुबूत है "अल्लाह तआला सीना से तुलुअ् किया, सीईर से चमका और कोहे फ़ारान् से तजल्ली किया।" (ख़ुत्बाते अहमदिया)। तौरात की इस आयत में अल्लाह तआला

सीना से तुलुअ् करने से मुराद मूसा (अ.स.) का ज़हूर है और सीईर से चमकने से मुराद ईसा (अ.स.) का ज़हूर और अल्लाह तआला के कोहे फ़ारान् से तजल्ली करने का मतलब हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का ज़हूर है।

इसी तरह किताब जनक़ूक़ बाब-३, आयत-३ में लिखा है, “अल्लाह तआला जुनूब (यतमान) से और क़ुद्दूस कोहे फ़ारान् से आएगा।” ज़ाहिर है कि यह पेशीन गोई ख़ास रसूलुल्लाह (स.अ.व.) से मख़्सूस है। अल्लाह तआला ने अपने हबीबे ख़ास के जाह व जलाल को ज़ाहिर करने के लिए ख़ातिमुल अम्बिया के ज़हूर को अपना ज़हूर क़रार दिया है।

इसी तरह मलाका नबी की किताब के बाब में लिखा है, “जिस ख़ुदावंद के तफ़हुस (तलास) में हो, यानि रसूले अहद के वह अपनी हैकल (आकार) में आएगा।” इस आयत में ख़ुदावंद के माना ख़ुदा-ए-तआला के हैं और उससे मुराद रसूले अहद हैं। (ख़ुत्बाते अहमदिया)।

आयाते मज़्कूरा में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का नाम न बता कर इशारा और किनाया (संकेत) में पेशीन गोई करना अल्लाह तआला की एक क़दीम सुन्नत है, जिसका मक़्सद आज़माइश (परीक्षा) है, कि कौन लोग ऐसे हैं-जो अपनी ईमानी क़ुव्वत से ग़ौर व ख़ोज करके अल्लाह के ख़ुलफ़ा की तस्दीक़ करते हैं और कौन लोग ऐसे हैं, जिनमें गुमराही का माद्दह ब-दर्जह अतम हुआ करता है कि, वह ज़ाहिरे अल्फ़ाज पर अड़े रहक़र अल्लाह के ख़ुलफ़ा की तस्दीक़ से महरूम रहते हैं।

तौरात वग़ैरह में इशारात और किनायात से अल्लाह के ख़ुलफ़ा की पेशीन गोई का जो तरीक़ा इख़्तियार किया गया है, उसी तरीके से

इमाम महेदी (अ.स.) के ज़हूर का ज़िक्र क़ुरआन शरीफ़ में भी किया गया है। (अर्बाबे बसीरत को इख़्तियार है कि वह ईमानी क़ुव्वत से ग़ौर व ख़ौस करके इमाम महेदी (अ.स.) के ज़हूर को ज़रूरी तस्लीम करें या अपनी ज़िद पर अड़े रह कर इन्कार करें।)

आयाते क़ुरआनी की तफ़्सीर आगे पेश की जाएगी।

सतही नज़र से भी ग़ौर किया जाये तो आयते इस्तिख़लाफ़ से साफ़ ज़ाहिर है कि, अल्लाह तआला ने उम्मते मोहम्मदियह में भी ख़ुलफ़ा को पैदा करने का वादा फ़र्माया है। जिस तरह उम्मते मोहम्मदियह से पहले के ज़माने में पैदा किया है। आयाते इस्तिख़लाफ़ में जहां उमूमियत के साथ ख़ुलफ़ा का ज़िक्र किया गया है। उसमें इमाम महेदी (अ.स.) भी ख़लीफ़तुल्लाह की हैसियत से शामिल समझे जा सकते हैं। आयते इस्तिख़लाफ़ यह है :

وَعَدَ اللّٰہُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِي الْاَرْضِ كَمَا اسْتَخْلَفَ الَّذِيْنَ مِنْ
قَبْلِهِمْ ۠ وَلَيُمَكِّنَنَّ لَهُمْ دِيْنَهُمُ الَّذِي ارْتَضٰى لَهُمْ وَلَيُبَدِّلَنَّهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ خَوْفِهِمْ اَمْنًا ۭ يَعْبُدُوْنَنِيْ لَا
يُشْرِكُوْنَ بِيْ شَيْــــًٔا ۭ وَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ

(अन नूर : ५५)

(जो लोग तुम में से ईमान लाए और अपने अमले सालेह करते रहे, अल्लाह तआला ने उनसे वादा फ़र्माया है कि, वह ज़रूर उनमें से दुनिया में ख़लीफ़ा बनाएगा। जैसा कि उनसे पहले के लोगौं को ख़लीफ़ा बनाया है और ज़रूर उनके उस दीन को-जो उनके लिए पसंद किया है, इस्तेहकाम देगा।)

इस आयत में अल्लाह तआला ने मोमिनीन सालेहीन से एक तो यह वादा फ़र्माया है कि, वह उनमें से बा’ज़ को ऐसा ही ख़लीफ़ा बनाएगा

जैसा कि उनसे पहले के लोगौं को ख़लीफ़ा बनाया है। दूसरा वादा यह है कि, अल्लाह तआला उनके दीन (इस्लाम) को-जो उनके लिए पसंद किया है, इस्तेहकाम (दृढ़ता) देगा। दीन की पसंदीदगी के एतिबार से आयत का सियाक़ (प्रकरण) बिलकुल ऐसा ही है, जैसा की आयत اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ में ज़िक्र किया गया है। चुनांचे उस आयत के अल्फ़ाज़ यह है :

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنً

(अल माइदह : ३)

(आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को बहुत कामिल कर दिया और मेरी नेमत तुम पर कामिल कर दी और मैंने तुम्हारे लिए दीन इस्लाम को पसंद किया है।)

आयते इस्तिख़लाफ़ में जिस दीन को मुस्तहक़म करने का वादा किया गया है, वह दीन इस्लाम के सिवा कोई और नहीं और यह दीन भी वही इस्लाम है जिसका ज़िक्र “मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को कामिल कर दिया” में आया है। जैसा कि “और मैंने तुम्हारे लिए दीन इस्लाम को पसंद किया” से ज़ाहिर है। दोनों आयतौं को मिलाने से यही नतीजा निकलता है कि, अल्लाह तआला ने उम्मते मोहम्मदियह के लिए जिस दीन को पसंद किया है वह दीन इस्लाम है और जिस दीन को मुस्तहक़म बनाने का वादा किया, वह भी दीन इस्लाम है। क्योंकि आयते اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ में وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ की सराहत आई है, तो आयते इस्तिख़लाफ में وَلَيُمَكِّنَنَّ لَهُمْ دِيْنَهُمُ الَّذِي ارْتَضٰى لَهُمْ के अल्फ़ाज़ हैं।

अब देखना यह है कि दीने कामिल के लिए इस्तहकाम की ज़रूरत है या नहीं। जैसा कि “लयुमक्किनन्न” के मफ़्हूम से ज़ाहिर है। बहुत सारी

अहादीस से साबित है कि आइन्दा ज़माने में बेदीनी और इर्तिदाद के वाक़िआत रूनुमा होंगे।

ख़ास तौर पर हज़रत हुजेफ़ा रज़ी० फ़र्माते हैं कि मैंने एक दफ़ा रसूलुल्लाह सल्ला० को ज़ार-ज़ार देखा तो अर्ज किया, “या रसूलुल्लाह सल्ला०! आप को क्या चीज़ ज़ार-ज़ार कर दी है?” आप ने फ़र्माया कि, “मैं क्यों न रोऊं, कि मेरी उम्मत पर ऐसे ज़माने आयेंगे कि उस में इस्लाम मफ़कूद (ग़ायब) हो जाएगा, लोग रोज़ा, नमाज़ और ज़कात तर्क कर देंगे, नाप-तोल में कमी की जाएगी, लोग झूटी गवाही देंगे, फ़हश बातौं का इफ़्शा (प्रकटन) होगा वग़ैरह।

इस हदीस से साबित है कि आइन्दा ज़मानौं में दीने इस्लाम का फ़ुक़दान होने वाला है, तो फिर दीने कामिल के इस्तेहकाम की भी ज़रूरत ख़ुलफ़ा के ज़रीए लाज़िमी है। यही वजह है कि, मज़हबे इस्लाम में उलमा को अम्बिया-ए-बनी इसराईल का मर्तबा दिया गया है और औलिया अल्लाह भी हमारे हादी और रहबर (मार्गदर्शक) है। नुसरते दीन के लिये ख़ुलफ़ा अल्लाह की हैसियत से महेदी मौऊद अले० और ईसा अले० के आने की ख़बर दी गई है कि, अपने मुअय्यना अवक़ात (निश्चित समय) में मब्ऊस होंगे।

आयत से ज़ाहिर है कि इस्लाम से पहले ख़ुलफ़ा उमरा आ चुके हैं, और रसूलुल्लाह सल्ला० ने इर्शाद फ़र्माया है कि, “ख़िलाफ़त तीस साल रहेगी। उसके बाद मलिक (बादशाहत) हो जाएगी। यह सूरत बिलकुल आयत “वजअलकुम ख़ुलफ़ा” की है, क्योंकि उम्मते मुहम्मदियह में ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन मुसलमानौं के इमामे वक़्त थे और उन हजरात के ज़माने में इस्लाम-जिस रुश्द-व-हिदायत के साथ रूशिनास

हुवा, तारीख़ गवाह है यह सब ख़ुलफ़ा थे। उनके बाद बादशाहाने बनी उमय्या और बनी अब्बास की मिसाल बिलकुल उमरा की सी है। आयते इस्तेख़लाफ़ से ज़हूरे महेदी अले० और नुज़ूले ईसा अले० का इशारा भी निकल सकता है। क्योंकि अहादीस में इन हर दो हज़रात को ख़लीफ़तुल्लाह कहा गया है।

जो लोग अहादीसे महेदी के मुख़ालिफ़ हैं, उनके पास बज़ाहिर दो वुजूह पाये ज़ाते हैं। एक तो यह कि बा'ज़ लोगौं ने अहादीसे महेदी को मौजूआत (निर्मित) से क़रार दिया है। उनका क़ौल है कि यह अहादीस महेदी अब्बासी की ख़ुशामद के लिये वज़अ किये (घड़े) गये हैं। दूसरी वजह यह है कि अहादीस के बा'ज़ रावियौं में ज़ोफ़ पाया जाता है। पहली वजह इस कारण ग़लत है कि, महेदी अब्बासी हज़रत अब्बास रज़ी० की औलाद से है और अहादीसे महेदी अले० में महेदी अले० की निस्बत औलादे फ़ातिमा रज़ी० से होने की सराहत आई है। अगर वाज़ेइन (घड़ने वालों) ने अहादीसे महेदी वज़ा की (घड़ी) हैं तो महेदी अब्बासी को महेदी फ़ातिमी से क्या फ़ायदा पहुंच सकता है, इसलिये साबित हुवा कि अहादीसे महेदी घड़ी हुई नहीं हैं।

दूसरी वजह का जवाब यह है कि अहादीसे महेदी की तेदाद, जिस तरह कि "इक़दुद्-दुरर् फ़ी अलामातिल महेदी अल मुन्तज़र और रिसालतुल महेदी"-जिसके लेखक मुल्ला अली अलक़ारी हैं, वग़ैरह किताबौं में दर्ज है कि, तक़रीबन् तीन सौ है। अहादीस की इस कसरत (अधिकता) की वजह से उलमा-ए-इस्लाम तवातुरे मानवी के क़ाइल हैं और तवातुर का इन्कार किसी तरह जाइज़ नहीं। तवातुर (निरंतरता) तस्लीम कर लेने के बाद इन्फ़िरादी तौर पर हर हदीस के रावी के ज़ोफ़ को

नज़र अन्दाज़ कर दिया जाता है। जो लोग अहादीसे महेदी को नहीं मानते, वह बड़ी ग़लत फ़हमी में मुब्तला है, उनको अपने ग़लत ख़याल की इस्लाह की तरफ़ तवज्जह करनी चाहिये।

अगरचे क़ुरआन शरीफ़ में महेदी अले० का नाम साफ़ तौर पर कहीं भी नहीं आया, मगर मुताद्दिद आयाते क़ुरआनी में आप का ज़िक्र इशारात और किनायात के तौर पर उसी तरह आया है, जिस तरह कि रसूलुल्लाह सल्ला० का ज़िक्र तौरात वग़ैरह में मौजूद है।

हमारा यह रिसाला जिसका नाम “अल क़ुरआन वल महेदी” है। हम ने इस में बतौरे नमूना आठ क़ुरआनी आयात पेश की हैं। जिनमें किनायात और इशारात के तौर पर महेदी अले० का ज़िक्र क़तअ और यक़ीन के साथ मौजूद है। ता कि जो लोग यह कहते हैं कि, क़ुरआन में महेदी अले० का ज़िक्र नहीं आया है, वह अपनी ग़लत फ़हमी दूर कर सकें। अल्लाह ही तौफ़ीक़ देने वाला है।

मुहम्मद अब्दुल हकीम हैदराबादी

(मुन्शी फाज़िल, मौलवी आलिम)

पहली आयते क़ुरआनी

اِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَ اللّٰهِ الْاِسْلَامُ ۟ وَمَا اخْتَلَفَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ اِلَّا مِنْۢ بَعْدِ مَا جَآءَهُمُ الْعِلْمُ
بَغْيًۢا بَيْنَهُمْ ؕ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَاِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ﴿۱۹﴾
فَاِنْ حَآجُّوْكَ فَقُلْ اَسْلَمْتُ وَجْهِيَ لِلّٰهِ وَمَنِ اتَّبَعَنِ ؕ

(आले इमरान : 19/20)

अनुवाद : दीन अल्लाह के नज़दीक सिर्फ़ इस्लाम है और अहले किताब ने इस (दीन) में-जो इख़्तिलाफ़ किया, वह आपस की ज़िद की वजह से किया, बाद इसके कि उन्हें सही इल्म पहुंच चुका था, और जो अल्लाह की आयतौं का इन्कार करे तो अल्लाह यक़ीनन् जल्द हिसाब लेने वाला है। ऐ पैग़म्बर! अगर वह लोग तुम से इस बारे में झगड़ा करें तो कह दो कि मैं अपना रुख़ अल्लाह की तरफ़ कर चुका और वह शख़्स भी-जो मेरा ताबे है।

मुफ़स्सिरीन की तफ़्सीर का ख़ुलासा यह है कि, दीन अल्लाह के नज़दीक इस्लाम है। तमाम अम्बिया-ए-साबिक़ीन का मज़्हब भी यही था और उन्हों ने इसी दीने इस्लाम की तब्लीग़ की। उनके बाद यहूदी और ईसाई आपस में लड़ने-झग़ड़ने लगे। कोई तो तौहीद और इस्लाम पर क़ायम रहा और किसी ने दीने हक़ से रूगरदानी इख़्तियार की। यह तफ़रिक़ा (फूट) इसलिये नहीं था कि उन्हें तौहीद और इस्लाम का इल्म नहीं था, इल्म तो ज़रूर था और अम्बिया-ए-साबिक़ीन (पूर्वकालीन) ने उसकी तब्लीग़ भी की थी। अब आपस के हसद और शैतानी वसवसौं ने उनको दीने हक़ से मूंह फेर लेने पर आमादा किया, जिस की वजह से उन्हों ने इस्लाम से इन्कार किया। जो शख़्स अल्लाह की आयतौं से इन्कार करे तो अल्लाह जल्द हिसाब लेने वाला है। उसके बाद इर्शाद होता है, ऐ

पैगम्बर! अगर आप से यहूद व नसारा और मुश्रिकीन झग़ड़ा करें तो कह दो कि मैंने और मेरे ताबे ने वही इस्लाम इख़्तियार किया है जिस की निस्बत कहा गया है कि “दीन अल्लाह के नज़दीक इस्लाम है” जिस पर तुम्हारे तमाम पिछले अम्बिया क़ायम थे और उसी की तब्लीग़ की थी।

इस आयत में लफ़्ज़ “मन्” बहस तलब है, जो आम भी होता है और ख़ास भी। आम तस्लीम करने की सूरत में उस से मुराद आम मोमिनीन होंगे और आयत का मतलब यह होगा कि, पैग़म्बर सल्ला० के मुत्तबेईन (अनुयायी) ख़्वाह वह किसी दर्जे के क्यों न हों। ख़ुद पैग़म्बर सल्ला० और पिछले अम्बिया के साथ इस्लाम लाने में यक्साँ शुमार किये जा सकते हैं, हालांकि आम मोमिनीन के इस्लाम अम्बिया अले० के इस्लाम में बड़ा फ़र्क़ है, जिसकी तफ़्सील यह है।

इस्लाम का लफ़्ज़-जिस तरह आम मुसलमानौं की निस्बत बोला जाता है, उसी तरह औलिया-ए-कामिलीन, अम्बिया-ए-मुरसलीन और रसूलुल्लाह सल्ला० की निस्बत भी बोला जाता है और इल्म, अमल, यक़ीन, माअरिफ़त और रूयते बारी तआला के लिहाज़ से बा’ज़ का इस्लाम बा’ज़ से मज़बूत तरीन और कामिल तरीन हो सकता है। उसकी वजह यह है कि, इस्लाम और मुसलमानी का मदार (आधार) शहादतैन यानि अल्लाह को वहदहु ला शरीक जानने पर है, लेकिन अल्लाह तआला को वाहिद मानने और उस पर एतक़ाद रखने और एतक़ाद के मुवाफ़िक़ अमल करने के लिहाज़ से कई दर्जे हैं।

फ़र्ज़ करो कि, एक शख़्स अल्लाह की वहदानियत का इकरार ‘ला इलाहा इल्लल्लाहु’ के ज़रीये करता है, मगर दिल में एतक़ाद नहीं रख़ता। दूसरा शख़्स इक़रार भी करता है और एतक़ाद भी रख़ता है, मगर

एतक़ाद के मुवाफ़िक़ अमल नहीं करता। तीसरा वह शख़्स है, जो इक़रार और एतक़ाद के मुवाफ़िक़ अमल भी करता है। यह तीनों अश्ख़ास एक ही दर्जे के नहीं है। पहले से दूसरा और दूसरे से तीसरा शख़्स इस्लाम लाने में ज़ियादा मज़्बूत और कामिल होगा।

सूफ़िया के मज़्हब की बिना पर तौहीद के मरातिब उस से भी आ'ला है। उनके पास मुवह्हिद (एकेश्वर वादी) वही है, जो अल्लाह के सिवा किसी पर तवक्कुल या भरोसा न करे, आयत "मोमिनीन अल्लाह ही पर भरोसा रखते हैं" उस पर दाल है।

सूफ़िया के पास इल्मुल् यक़ीन भी काफ़ी नहीं है, वह ऐनुल यक़ीन चाहते हैं। उस से भी आ'ला मक़ाम तौहीदे ज़ाती में ज़ाते अहदियत मौसूफ़ बजमी सिफ़ात में फ़ना हासिल करके किसी ख़ास सिफ़त या किसी इस्म का तक़य्युद न होना, यह सब से आ'ला मक़ाम है। तक़य्युद और इतलाक़ के एतिबार से इन दोनों मक़ामात में पहला मक़ाम बशर्ते तक़य्युद अम्बिया अले० का, दूसरा मक़ाम बशर्ते इतलाक़ रसूलुल्लाह सल्ला० का है। (ख़ुलासा तन्वीरुल अब्सार)

ख़ुलासा यह कि आम मोमिनीन से औलिया अल्लाह और औलिया अल्लाह से सहाबा और सहाबा से पैग़म्बरों का और पैग़म्बरों से रसूलुल्लाह सल्ला० का इस्लाम अर्फ़ा और आ'ला (सर्वोच्च) है। इसलिये आयत में मुत्तबईन से मुराद आम मोमिनीन लिये जायें तो अत्फ़ सही न होगा। चूंकि मातूफ़ और मातूफ़ अलैहि एक हुक्म में होते हैं। इसलिये इस आयत के यह माना (अर्थ) कि रसूलुल्लाह सल्ला० और आम मोमिनीन का इस्लाम बराबर है-ख़िलाफ़े अक़्ल है। इसलिये लफ़्ज़ "मन्" ख़ास है

और उस से मुराद एक ऐसी ज़ाते अक़दस होना चाहिये कि मातूफ़ और मातूफ़ अलैहि एक मंज़िल में आ जायें।

चूंकि महेदी अले० हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की तरह ख़लीफ़तुल्लाह, मासूम अनिल् ख़ता, दीन के क़ायम करने वाले, दाफ़े हलाकते उम्मत और ख़ातिमे विलायते मुहम्मदिया हैं। और हज़रत मुहियुद्दीन इब्ने अरबी रहे० ने "फ़ुतूहात" में आप को मुल्हिक़ बिल अम्बिया और "इल्मे सुकूती" में रसूलुल्लाह सल्ला० और इमाम महेदी अले० को यक्साँ तौर पर शुमार किया है इसलिये लफ़्ज़ "मन्" को इस आयत में ख़ास तस्लीम कर के इमाम महेदी अले० मुराद लेना ज़ियादा दुरुस्त होगा।

इमाम महेदी अले० का ख़लीफ़तुल्लाह होना हदीसे सौबान रज़ी० से ज़ाहिर है। सौबान रज़ी० कहते हैं कि, "रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया है कि, तुम्हारे कंज़ यानि ख़िलाफ़त के लिये तीन आदमी झगड़ा करेंगे। वह सब ख़लीफ़ा के बेटे होंगे। उनमें से किसी को ख़िलाफ़त नहीं मिलेगी। फिर सियाह झंडियाँ मश्रिक़ की तरफ़ से निकलेंगी, तो तुम को यानि मुसलमानौं को ऐसा क़तल करेंगे कि कोई क़ौम इस तरह क़तल न की होगी। फिर अल्लाह के ख़लीफ़ा महेदी अले० आयेंगे। तुम उनको सुनो तो उनके पास आओ। उनसे बैअत करों। अगरचे बरफ़ पर से रेंगते जाना पड़े।" (इब्ने माजा, हाकिम, अबू नुएम)

इसी तरह एक और हदीस हज़रत इब्ने उमर रज़ी० से भी आई है। जिसको इब्ने शेबा ने लिखा है। "इब्ने उमर रज़ी० कहते हैं कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया है कि, महेदी इस हालत में ज़हूर करेंगे कि

फ़रिश्ता आप के ऊपर निदा करेगा कि यह महेदी ख़लीफ़तुल्लाह हैं। तुम उनकी इत्तेबा करो।”

इन दोनों हदीसों से साबित है कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने महेदी अले० को ख़लीफ़तुल्लाह फ़र्माया है।

अगरचे ख़लीफ़तुल्लाह का मासूम अनिल् ख़ता (निष्पाप) होना अक़लन् साबित है, क्योंकि अगर ऐसा न हो, तो हिदायत का काम ख़ता से ख़ाली न होगा, ता हम एक हदीसे मर्फ़ूअ से, जिसको हज़रत मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी ने “फ़ुतूहात” में बयान किया है-महेदी अले० का मासूम अनिल् ख़ता होना साबित है। “रसूलुल्लाह सल्ला० फ़र्माते हैं कि महेदी मुझ से है। वह मेरे निशाने क़दम की पैरवी करेंगे और ख़ता नहीं करेंगे।”

महेदी अले० के क़ियामे दीन की हदीस यह है, जिसको अबू नुएम अस्फ़हानी ने लिखा है।

“रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया है कि, महेदी आख़िर ज़माने में उसी तरह दीन को क़ायम करेंगे, जिस तरह मैंने उसको अव्वल ज़माने या अव्वल इस्लाम में क़ायम किया है।”

दाफ़-ए-हलाकते उम्मत की अहादीस में रसूलुल्लाह सल्ला० के साथ-साथ इमाम महेदी अले० और ईसा अले० का ज़िक्र भी आया है। अबू नुएम ने अख़बारे महेदी अले० में इब्ने अब्बास रज़ी० से रिवायत की है- “वह उम्मत-हरगिज़ हलाक नहीं हो सकती-जिसके अव्वल मैं हूँ और ईसा अले० उसके आख़िर में और महेदी अले० उसके वस्त (दरमियान) में हैं।”

इब्ने असाकर ने रिवायत की है-"क्योंकर हलाक होगी वह उम्मत, जिसके पहले मैं हूँ और ईसा बिन मर्यम उसके आख़िर में और महेदी मेरे अहले बैत से उसके वस्त में हैं।"

तफ़्सीरे मदारिक में आयत "इन्नी मुतवफ़्फ़ीक व राफ़ेउक इलय्या (आले इमरान-55) के तहत यह हदीस लिखी है।" क्योंकर हलाक होगी वह उम्मत, जिसके अव्वल मैं हूँ और ईसा उसके आख़िर में और महेदी मेरे अहले बैत से उसके वस्त में हैं।"

इमाम जाफ़र रज़ी० से मरवी रिवायत के अल्फ़ाज़ यह हैं-"हज़रत इमाम जाफ़र रज़ी० अपने पिता से वह दादा की रिवायत से कहते हैं कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया कि, वह उम्मत कैसे हलाक होगी, जिसके अव्वल मैं हूँ और उसके दरमियान महेदी और मसीह उसके आख़िर में हैं। लेकिन उनके दरमियान ऐसी कंज फ़हम (टेढ़ी समझ वाली) जमाअत है, जो न मेरी है न मैं उसका हूँ।"

याह्या बिन अब्दुल्लाह बिन हसन रज़ी० से रिवायत है कि, हज़रत अली रज़ी० ने अपने ख़ुत्बे में फ़र्माया कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने बहुत सी बातें फ़र्माईं। उन्हीं में से यह भी फ़र्माया कि, "ए अली! वह उम्मत कैसे हलाक होगी, जिसके अव्वल मैं हूँ और हमारे महेदी उसके वस्त में और मसीह इब्ने मर्यम उसके आख़िर में हैं।"

यह सब अहादीस मुत्तहिदुल माना (एक ही अर्थ वाले) और तक़रीबन् मुत्तहिदुल लफ़्ज़ भी हैं। अगरचे पहली तीन हदीसे मरफ़ू नहीं मालूम होती, लेकिन यह अल्फ़ाज़ कि, "मैं उसके अव्वल हूँ" और "मेरे अहले बैत से" की निस्बत मुख़्बिरे सादिक़ सल्ला० की तरफ़ हो सकती

है। इसलिये यह अहादीस मानन् मरफ़ू हैं और आख़िरी दो हदीसे तो बिलकुल मरफ़ू (वह हदीस-जो हुज़ूर सल्ला० की तरफ़ मन्सूब हो) हैं।

जिस तरह रसूलुल्लाह सल्ला० ख़ातिमुल अम्बिया वल मुरसलीन है, उसी तरह महेदी अले० ख़ातिमुल औलिया और ख़ातिमे विलायते मुहम्मदिया है। जैसा कि हज़रत अली रज़ी० ने जनाब रिसालत मआब सल्ला० से पूछा कि, "महेदी हम में से हैं या हमारे ग़ैर से?" तो हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया "बल्कि महेदी अले० हम में से हैं। अल्लाह तआला उन पर दीन को ख़तम करेगा। जिस तरह हम से (दीन को) शुरू किया है।" अबुल कासिम तब्री, अबू नएम अस्फ़हानी, अब्दुर् रहमान बिन हातिम, अबू अब्दुल्लाह नईम बिन हम्माद वग़ैरह ने इस हदीस की तख़रीज की है।

हज़रत मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी रहे० ने "फ़ुतूहात" के बाब-666 में महेदी अले० को मुल्हिक़ बिल अम्बिया क़रार दिया है और लिखा है "रसूलुल्लाह सल्ला० ने महेदी अले० के बारे में मासूम अनिल् ख़ता होने की ख़बर दी है और आप को मुल्हिक़ बिल अम्बिया क़रार दिया है।"

"फ़ुसूसुल हिकम" में हज़रत मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी रहे० ने बयान किया है कि इल्मे सुकूती हज़रत ख़ातिमुल अम्बिया यानि रसूलुल्लाह सल्ला० और ख़ातिमुल औलिया यानि इमाम महेदी अले० की ख़ुसूसियात से है। किताब की इबारत यह है :

"हम में बा'ज़ वह हैं जो अपने इल्म में जाहिल हैं और यह कहते हैं कि, इदराक (ज्ञान) से अज्ज़ (अयोग्यता) का इज़्हार भी इदराक है, और हम में बा'ज़ वह हैं-जो जानकर भी ऐसा नहीं कहते और यह ब-एतेबारे क़ौल आ'ला है। बल्कि ख़ुदा उसको इल्मे सुकूती अता किया है।

जैसा कि पहले को अज्ज़ अता किया है और यही बड़ा आलिम बिल्लाह है और यह इल्में सुकूती सिवाय ख़ातिमुर् रूसुल और ख़ातिमुल औलिया के किसी को हासिल नहीं है, और अम्बिया और रूसुल सिवाय मिश्काते ख़ातिमुर् रूसुल के अल्लाह को नहीं देखते। उसी तरह औलिया में से कोई भी वली-ए-ख़ातिम की मिश्कात के बग़ैर अल्लाह को नहीं देख़ता। यहाँ तक कि अम्बिया औलिया भी जब कभी ख़ुदा को देखेंगे तो मिश्काते ख़ातिमुल औलिया से देखेंगे।”

इस इबारत से रसूलुल्लाह सल्ला० की तरह महेदी अले० को भी इल्मे सुकूती हासिल होना ज़ाहिर है और इल्मे सुकूती रखने वाला सब से बड़ा आलिम बिल्लाह होता है, औलिया अल्लाह-हत्ता कि अम्बिया और रूसुल भी ख़ुदा को देखेंगे तो मिश्काते ख़ातिमुल औलिया से देखेंगे-जो ख़ातिमुल अम्बिया का बातिन है।

”शर्ह फ़ुसूसुल हिकम” में “फ़ुतूहात” के हवाले से यह बताया गया है कि, महेदी अले० ताबे शरीअते मुहम्मदिया होते हूए आपका बातिन रसूलुल्लाह सल्ला० का बातिन है। इसलिये तमाम अम्बिया और औलिया महेदी अले० के ताबे हैं। किताब की इबारत यह है-“महेदी-जो आख़िर ज़माने में आयेंगे, वह अहकामे शरीअत, मआरिफ़, उलूम और हक़ीक़त में ताबे मुहम्मद सल्ला० है और तमाम अम्बिया और औलिया आप के ताबे होंगे, यह ताबे होने का ज़िक्र नुक़्स नहीं पैदा करता। क्योंकि महेदी का बातिन रसूलुल्लाह सल्ला० का बातिन है।”

इस बहस के अलावा क़ुरआनी नज़्मे कलाम का इक़्तिज़ा यह है कि, जिस तरह रसूलुल्लाह सल्ला० और आप से पहले अम्बिया अले० का इस्लाम अर्फ़ा और आ’ला (सर्वोत्तम) है। उसी तरह रसूलुल्लाह सल्ला०

के बाद आनेवाली ज़ाते अक़्दस का इस्लाम भी अफ़्रा और आ'ला होना चाहिये, इसलिये इस आयत में "मन्" को ख़ास मान कर उससे मुराद इमाम महेदी अले० लेना ही क़रीबुस्-सिहत (सही) होगा, वर्ना लफ़्ज़ "मन्" को आम (सामान्य) क़रार दे कर आम मोमिनीन् मुराद लेना-जिनका इस्लाम औलिया अल्लाह से भी कम दर्जे का होता है, क़ुरआनी नज़्मे कलाम के ख़िलाफ़ है।

जब यह तस्लीम किया जा चुका है कि, महेदी अले० का बातिन रसूलुल्लाह सल्ला० का बातिन है और इस लिहाज़ से तमाम अम्बिया और औलिया का महेदी अले० के ताबे होना मुतनाक़िस नहीं है, तो इस ज़ेरे बहस आयत में रसूलुल्लाह सल्ला० के इस्लाम के साथ महेदी अले० के इस्लाम का ज़िक्र होना ही वाजिबुत्-तस्लीम (मानने योग्य) हो सकता है, न कि आम मोमिनीन के इस्लाम का ज़िक्र।

इस आयत में "मन्" का लफ़्ज़-जिसके माना "वह शख़्स" के हैं, ऐसा ही है, जैसा कि हज़रत याह्या अले० के क़ौल में आया है-"मैं उसकी आवाज़ हूँ-जो बियाबान में पुकारता है कि, ख़ुदा का रास्ता सीधा करो।" (ख़ुत्बाते अहमदिया) जिस तरह हज़रत याह्या अले० ने अपने क़ौल में लफ़्ज़ "उस" से रसूल मक़बूल सल्ला० की तरफ़ इशारा किया है। उसी तरह इस ज़ेरे बहस आयत में "मन्" से मुराद "महेदी अले०" हैं।

अगर, यहाँ यह एतराज किया जाए कि "मनित् तबअन्" में "इत्तबअ" फ़ेले माज़ी (भूतकाल क्रिया) है और महेदी अले०. बिला शक् आइन्दा ज़माने में रसूलुल्लाह सल्ला० की बताई हुवी अलामात के मुवाफ़िक़ मब्ऊस होंगे, तो इस सूरत में फ़ेले माज़ी को फ़ेले मुस्तक़बिल (भविष्यतकाल क्रिया) कैसे क़रार दिया जा सकता है? तो इस एतराज

का जवाब यह है कि, तौरात में ईसा अले० की पेशीन गोई में "सेईर से चमका" के अल्फ़ाज़ आये हैं। यानि ख़ुदा सेईर से चमकेगा। इसी तरह रसूलुल्लाह सल्ला० की निस्बत पेशीन गोई है कि, "ख़ुदा कोहे फ़ारान् से तजल्ली किया" हालांकि, ईसा अले० मूसा अले० के एक अरसे बाद और रसूलुल्लाह सल्ला० ईसा अले० से लग-भग छ सौ साल बाद, मक्का मुअज़्ज़मा में पैदा हूए हैं। जब "चमका" और "तजल्ली किया" के अल्फ़ाज़ माज़ी के सेग़े (भूतकाल) होने के बावजूद उन से ज़मान-ए-मुस्तक़बिल (भविष्यतकाल) के माना लिये ज़ाते हैं, तो "ईत्तेबाअ की" के लफ़्ज़ से-जो माज़ी का सेग़ा है, मुस्तक़बिल के माना (अर्थ) लेने में कौन सा अम्र माने (निषेधक) है।

बहरहाल आयत "फ़इन् हाज्जूक फ़क़ुल अस्लम्तु वज्हिय लिल्लाहि व मनित्-तबअनि" का सही मतलब यूँ है कि, ऐ पैग़म्बर! अगर तुम से यहूद व नसारा और मुश्रिकीन झगड़ा करें तो कह दो कि, मैं अम्बिया-ए-साबिक़ीन की तरह इस्लाम लाया हूँ और वह शख़्स भी इसी तरह इस्लाम लायगा-जो मेरा ताबे है। इसलिये "मन्" का लफ़्ज़ निःसंदेह ख़ास है और उससे मुराद हज़रत महेदी अलैहिस्सलाम हैं।

दूसरी आयते क़ुरआनी

يٰٓاَيُّهَا النَّبِيُّ حَسْبُكَ اللّٰهُ وَمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ

(अल् अन्फाल : 64)

ऐ नबी! तुम को और उस शख़्स को-जो तुम्हारा ताबे मोमिनीन से है, अल्लाह तआला (मदद् के लिये) काफ़ी है। (8:64)

यह आयत ग़ज़्व-ए-बदर के क़िताल से पहले नाज़िल हुई है। पूरी आयत यह है :

وَاِنْ جَنَحُوْا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَي اللّٰہِ ۭ اِنَّهٗ هُوَالسَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝ وَاِنْ يُّرِيْدُوْٓا
اَنْ يَّخْدَعُوْكَ فَاِنَّ حَسْبَكَ اللّٰہُ ۭ هُوَالَّذِيْٓ اَيَّدَكَ بِنَصْرِهٖ وَبِالْمُؤْمِنِيْنَ ۝ۙ وَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ ۭ لَوْ اَنْفَقْتَ
مَا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا مَّآ اَلَّفْتَ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ وَلٰكِنَّ اللّٰہَ اَلَّفَ بَيْنَهُمْ ۭ اِنَّهٗ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝ يٰٓاَيُّهَا النَّبِيُّ
حَسْبُكَ اللّٰہُ وَمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝

(अल् अन्फाल : 61...64)

(अनुवाद) और अगर यह लोग सुलह (संधि) की तरफ़ मायल हो तो तुम भी इसकी तरफ़ मायल हो जाओ और अल्लाह पर भरोसा रखो। बेशक वह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है। और अगर वे तुम्हें धोका देना चाहेंगे तो अल्लाह तुम्हारे लिये काफ़ी है। वही है जिसने अपनी नुसरत (मदद्) और मोमिनों के ज़रिए तुम्हें क़ुव्वत दी। और उनके दिलौं में उलफ़त (अनुराग) पैदा कर दी और अग़र तुम-ज़मीन में जो कुछ है, सब खर्च कर डालते, तब भी उनके दिलौं में उलफ़त पैदा न कर सकते, लेकिन अल्लाह ही ने उनमें उलफ़त डाल दी, बेशक वह ज़बरदस्त और हिकमत वाला है। ऐ नबी! तुमको और उस शख़्स को-जो तुम्हारा ताबे मोमिनीन से है, अल्लाह काफ़ी है। (8:61-64)

बा'ज़ मुफ़स्सिरीन ने आख़िरी आयत की तफ़्सीर इस तरह की है :

"ऐ नबी! अल्लाह तआला और इत्तेबा करने वाले मोमिनीन तुम्हारी मदद् के लिये काफ़ी है"-जो क़रीने क़ियास (सम्भवत:) नहीं हो सकता, इसका साफ़ मतलब यही होगा कि नबी सल्ला० की मदद् में अल्लाह तआला के साथ इत्तेबा करने वाले मोमिनीन की मदद् भी शामिल

है। गोया नबी सल्ला० कुफ़्फ़ार के मुक़ाबिले में न सिर्फ़ अल्लाह की मदद् से कामयाब होते हैं, बल्कि अल्लाह की मदद् के साथ इत्तेबा करने वाले मोमिनीन की मदद् भी शामिल होगी। जिस से शिर्के हक़ीक़ी का पहलू साफ़ तौर पर नुमायाँ हो जाता है।

इस आयत से पहले “अल्लाह तुम्हारे लिये काफ़ी है, वही है जिसने अपनी नुसरत और मोमिनों के ज़रिए तुम्हें क़ुव्वत दी” से बज़ाहिर यह शुब्हा पैदा होता है कि, अल्लाह ने अपनी मदद् और मोमिनीन के ज़रिए नबी सल्ला० को क़ुव्वत दी है, तो इससे ख़ुदा की मदद् में मोमिनीन का ज़रिआ भी शरीक हो जाता है। इसका जवाब यह है कि अल्लाह मुसब्बिबुल अस्बाब (साधन उपस्थित करनेवाला) है, वह जिसके ज़रिए से काम लेना चाहता है, लेता है। उसका इर्शाद है, “वह जो चाहता है और उसका जो इरादा होता है, करता है।” अगर ख़ुदा ने अपनी मदद् से नबी सल्ला० को मदद् दी है, तो यह उसकी ख़ालिस और ग़ैबी मदद् है और अगर मोमिनीन को नबी सल्ला० की क़ुव्वत का ज़रीआ बनाया है, तो यह एक सबबे ज़ाहिर या ज़ाहिरी मदद् है। इस आयत में “बिनसरिही” (अपनी मदद्) से ग़ैबी मदद् और “बिल मोमिनीन” (मोमिनीन के ज़रिए) से ज़ाहिरी मदद् मुराद है और उस मदद् के असल फ़ाइल (कार्यकर्ता) मोमिनीन नहीं हैं। बल्कि उसका फ़ाइले हक़ीक़ी और मुख़्तार भी ख़ुदा-ए-तआला ही है।

इसके बर अक्स “हस्बुकल्लाहु व मनित्-तबअक मिनल् मोमिनीन” का अनुवाद इस तरह करना कि, नबी सल्ला० को अल्लाह तआला और मोमिनीन की मदद् काफ़ी है। इस में न सिर्फ़ लफ़्ज़ अल्लाह फ़ाइल होता है, बल्कि उसके मोमिनीन भी फ़ाइल हो ज़ाते हैं और यह

साबित होता है कि, अल्लाह के साथ मोमिनीन की मदद् भी शामिल हो कर नबी सल्ला० को कामयाबी हासिल होती है, इसलिये ऐसा अनुवाद किसी तरह मुनासिब नहीं।

क़ुरआन शरीफ़ में बा'ज़ आयात ऐसी हैं-जिन में "हस्बी अल्लाहु" के अल्फ़ाज़ मौजूद हैं और उन में मदद् के साथ किसी और की मदद् शामिल होने का शाइबा (संदेह) तक नहीं है। जैसे...

- पस अगर वह ना मानें तो, ऐ मुहम्मद! सल्ला० कह दो कि, मुझको अल्लाह तआला काफ़ी है। जिसके सिवा कोई माबूद नहीं। मैं ने अल्लाह पर भरोसा किया है और वह अर्शे अज़ीम का रब है। (अत् तौबा-129)
- कह दो, ऐ मुहम्मद! सल्ला० कि मुझको अल्लाह तआला काफ़ी है। उसी पर मुतवक्किलीन का भरोसा है। (अज़् ज़ुमर - 38)

इन आयात में रसूलुल्लाह सल्ला० को ख़ुदा की तरफ़ से यह कहने का हुक्म हुवा है कि, मुझे अल्लाह की मदद् काफ़ी है। नीचे की आयात में क़ुल् या मुहम्मद (कह दो, ऐ मुहम्मद!) के अल्फ़ाज़ महज़ूफ़ हैं।

जैसे...

- जो शख़्स अल्लाह पर भरोसा रख़ता है, अल्लाह उसके लिये काफ़ी है। (अत् तलाक़-3)
- अल्लाह ने उनके ईमान को ज़ियादा कर दिया। उन्हों ने कहा कि हमको अल्लाह की मदद् काफ़ी है। (आले इमान-173)

इस आख़री आयत का मतलब यह है कि, किसी ने मुसलमानौं से आ कर कहा कुफ़्फ़ारे क़ुरेश बड़ी फ़ौज जमा कर रहे हैं। मुसलमानौं को

इस ख़बर से कोई ख़ौफ़ पैदा नहीं हुवा। बल्कि, ख़ुदा ने उनका ईमान और ज़ियादा कर दिया। वह यह कह उठे कि, हम को ख़ुदा की मदद् काफ़ी है।

बहरहाल इस क़िसम की तमाम आयतौं में बिला शिर्कत ग़ैरे ख़ालिस ख़ुदा की मदद् का ज़िक्र मौजूद है। जब अल्लाह तआला की मदद् किसी ग़ैर की शिर्कत के बग़ैर रसूलुल्लाह सल्ला० के लिये काफ़ी है। “हस्बुकल्लाहु व मनित्-तबअक मिनल् मोमिनीन” का तर्जुमा इस तरह क्यूं किया जाए, जिस से ख़ुदा की मदद् ख़ालिस (शुद्ध) न रहे और ख़ुदा की मदद् के साथ मोमिनीन की मदद् का शाइबा पैदा हो कर नबी सल्ला० को कुफ़्फ़ार के मुकाबले में कामयाबी हासिल हो, जिससे शिर्के हक़ीक़ी का पहलू नुमायाँ हो जाये।

उसके बजाए मौलवी फ़तेह मुहम्मद खाँ साहब जालंधरी का किया हुवा तर्जुमा, “ऐ नबी! तुमको और तुम्हारे अस्हाब को-जो मुत्तबईन मोमिनीन हैं, कुफ़्फ़ार के मुक़ाबिले में अल्लाह की मदद् काफ़ी है” फिर भी ठीक है। लेकिन हमारे ख़याल में ग़ज़्व-ए-बदर के ख़ास मौक़े के लिहाज़ से यह तर्जुमा भी उतना सही नहीं हो सकता, क्योंकि जब ख़ुदा ने नबी सल्ला० की मदद् को काफ़ी होने की बशारत दी है, तो उसमें वह तमाम मोमिनीन भी शामिल हो सकते हैं, जो ग़ज़्व-ए-बदर में शरीक हूए और कामयाबी हासिल की। रसूलुल्लाह सल्ला० को शुद्ध बशारत देने के माने ठीक ऐसे हैं, जैसे कोई शख़्स कहे कि फ़लाँ नेक दिल और नेक सीरत बादशाह को ख़ुदा-ए-तआला कामयाबी अता करने के लिये काफ़ी है, उसमें बादशाह के साथ फ़ौज की फ़तेहमन्दी भी शामिल रहेगी, क्योंकि सिर्फ़ बादशाह ख़ुद फ़त्ह हासिल नहीं कर सकता। ता वक़्ते कि फ़ौज को भी कामयाबी न हो। इसी तरह रसूलुल्लाह सल्ला० को ख़ुदा की मदद्

हासिल होने में अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० को भी ख़ुदा की मदद् शामिल रहेगी, क्योंकि ग़ज़्व-ए-बदर की कामयाबी में रसूलुल्लाह सल्ला० के तुफ़ैल आपके अस्हाब भी शरीक थे।

जब "हस्बुकल्लाहु" (ऐ नबी! तुमको अल्लाह की मदद् काफ़ी है) में नबी सल्ला० के साथ अस्हाब भी शरीक हैं, तो फिर "मनित्-तबअक मिनल् मोमिनीन" (जो तुम्हारा ताबे मोमिनीन से है) से कौन से मुत्तबईन और मोमिनीन मुराद होंगे? ज़ाहिर नहीं होता। ग़ज़्व-ए-बदर में शरीक होने वाले मोमिनीन का ज़िक्र "या अय्युहन् नबी हस्बुकल्लाहु" की आयत में नबी सल्ला० के साथ छिपा हुवा है, तो फिर "मनित्-तबअक मिनल् मोमिनीन" में मुत्तबईन मोमिनीन ज़ायद और बे फ़ायदा साबित होंगे, या उनको आइंदा ज़माने के मोमिनीन तस्लीम करना होगा। चूंकि ग़ज़्व-ए-बदर के मोमिनीन के साथ आइंदा ज़माने के मोमिनीन को फ़र्ज़ करने का न कोई क़रीना है और न कोई वाक़ेआ मुताल्लक़ा। इसलिये यह मोमिनीन ज़ायद और ग़ैर ज़रूरी ही साबित होंगे।

नह्वी तर्कीब (व्याकरण) के लिहाज़ से "मिनल् मोमिनीन" में "मिन्" को बयानिया माना जाये तो माने यह होंगे, "ऐ नबी! वह तमाम लोग-जो तुम्हारी इत्तिबा करने वाले हैं, उनको भी ख़ुदा काफ़ी है। जो लोग इत्तिबा करने वाले हैं-वह सब मोमिनीन हैं।" इस फ़िक्रे की तक़दीर यह होगी। "वल मोमिनीन मिनल् मोमिनीन" और इस तक़दीर का ग़लत होना वाज़ेह है। अलबत्ता, लफ़्ज़ "मन्" को ख़ास माना जाये तो मोमिनीन में से कोई ख़ास शख़्स मुराद हो सकता है, और उस से माना में कोई ख़राबी लाज़िम नहीं आती। "मन्" को ख़ास लेने की सूरत में ईसा अले० भी

मुराद नहीं होते, क्योंकि वह नबी थे और हैं। उनकी निस्बत “मिनल् मोमिनीन” की क़ैद बेफ़ायदा साबित होगी।

अगर यह कहा जाए कि, इस से पहले की आयत “फ़इन्न हस्बुकल्लाहु हुवल्लज़ी अय्यदक बिनस्रिही व बिल मोमिनीन” से कौन से मोमिनीन मुराद हैं? क्या यह भी ज़ाइद (अधिक) और बेफ़ायदा है? इसका जवाब यह है कि इस आयत में ख़ुदा-ए-तआला को दो क़िसम की मदद् बताना मन्ज़ूर था, एक ग़ैबी मदद् जिसको फ़रिश्तौं के ज़रीये की मदद् कहते हैं और दूसरी इन्सानौं के जरीये की मदद्। इसलिये “बि-नस्रिही” से ग़ैबी मदद् की तरफ़ इशारा किया गया है और “बिल मोमिनीन्” से इन्सानी मदद् मुराद ली गई है।

इसलिये “हस्बुकल्लाहु” (अल्लाह तुम्हारे लिये काफ़ी है) की तश्रीह (अपनी मदद् और मोमिनीन के ज़रीए तुमको शक्ति दी है) से की गई है। जब मोमिनीन का ज़िक्र आ गया है, तो बाद की आयत से “ऐ नबी! अल्लाह तुम्हारे लिये काफ़ी है।” में सिर्फ़ नबी सल्ला० का ज़िक्र मुन्फ़रिदन् (अकेले) और अस्हाब का ज़िक्र ज़िम्नन् हो सकता है। इस आयत की नौइयत पहले वाली आयत से बिलकुल जुदागाना है। यानि साबिक़ा आयत में मोमिनीन का ज़िक्र लफ़्ज़न् आ सकता है। लेकिन आयत “या अय्युहन् नबीयू हस्बुकल्लाहु” में अस्हाब का ज़िक्र ज़िम्नन् हो सकता है-जिसकी तश्रीह इस बाद की आयत में आई है और उसके अल्फ़ाज़ नीचे दर्ज हैं,

يَآيُّهَا النَّبِيُّ حَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ عَلَي الْقِتَالِ ۝ اِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ عِشْــرُوْنَ صٰبِرُوْنَ يَغْلِبُوْا
مِائَـتَيْنِ ۝ وَ اِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ يَّغْلِبُوْٓا اَلْفًا مِّنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ ۝

(अल् अन्फाल : 65)

इस आयत का मतलब यह है कि “हस्बुकल्लाहु” की आयत के तहत नबी सल्ला० के साथ-जिन अस्हाब का ज़िक्र शामिल था, उन्हीं की निस्बत इर्शाद हुवा है कि, ऐ नबी! सल्ला० तुम मोमिनीन को जंग की तरग़ीब दो। अगर तुम में से बीस आदमी साबिर हों, तो दो सौ पर ग़ालिब आयेंगे और अगर तुम में से सौ आदमी हों, तो हज़ार काफ़िरौं पर ग़ालिब आयेंगे, क्योंकि वह बेदानिश हैं।

इस तश्रीह से भी वाज़ेह है कि “व मनित् तबअक मिनल् मोमिनीन” का फ़िक़रा बिलकुल ज़ायद है। क्योंकि ग़ज़्व-ए-बदर के मोमिनीन की तश्रीह “हर्रिज़िल् मोमिनीन” की आयत से साबित है। अगर लफ़्ज़ “मन्” को जमा के माने में ना फ़र्ज़ करें, बल्कि ख़ास तस्लीम करें, तो आयते मज़्कूर को ज़ायद और बेफ़ायदा क़रार देना लाज़िम ना आ सकेगा और तर्जुमा यूँ होगा : “ऐ नबी! तुमको और उस शख़्स को-जो मोमिनीन से ताबे है, अल्लाह की मदद् काफ़ी है।” “मन्” का ख़ास तस्लीम करने से ऐसा शख़्स मुराद लेना ज़रूरी होगा, जिसकी ज़ात रसूलुल्लाह सल्ला० की तरह मामूर मिनल्लाह ख़लीफ़तुल्लाह हो, जिसकी ख़बर ख़ुद रसूलुल्लाह सल्ला० ने दी है। ताबे का मफ़्हूम (अर्थ) बतौर इशारतुन् नस् ज़ाहिर करता है कि, यहाँ “मन्” से मुराद ख़ास इमाम “महेदी अले०” हैं, जो अल्लाह तआला की बिला वास्ता तालीम के तहेत ताब-ए-शरीअते मुहम्मदिया सल्ला० हैं। इसलिये हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के ताबे ताम हैं। जैसा कि पहली आयत की तफ़्सीर में “शर्ह फ़ुसूसुल हिकम” की इबारत से वाज़ेह हो चुका है और दीगर फ़ज़ायल और मनाक़िब भी ज़िक्र किये जा चुके हैं।

अगर यहाँ एतिराज़ हो कि, ख़ास ग़ज़्व-ए-बदर के मौक़े पर लफ़्ज़ "मन्" को ख़ास मानकर इमाम महेदी अले० मुराद लेने का कौन सा क़रीना और कौन सा मुतअल्लिक़ा वाक़ेआ है? तो उसका जवाब यह है कि, अल्लाह तआला ने आयत "अय्यंख़्दऊक" के जवाब में रसूलुल्लाह सल्ला० को तसल्ली दी है कि, अगर तुमको यह शुब्हा हो कि कुफ़्फ़ार सुल्ह के बहाने से जंग की तय्यारी करके धोका देंगे तो अल्लाह तआला ना सिर्फ़ तुम्हारी मदद् करेगा बल्कि उस मामूर मिनल्लाह की मदद् को भी काफ़ी है, जो आइंदा ज़माने में आयेगा। जिनके आने की ख़बर ख़ुदा ने क़ुरआन शरीफ़ में भी दी है और अहादीस मुतवातिरूल माना से भी साबित है। इसी तरह अल्लाह तआला ने तमाम अल्लाह के ख़लीफ़ौं की मदद् की है, जो गुज़िश्ता ज़माने में मब्ऊस हूए हैं। इसी वजह से "हस्बुकल्लाहु" की "काफ़" पर अत्फ़ डाल कर "व मनित् तबअक मिनल् मोमिनीन" बयान किया गया है। ता कि मामूर मिनल्लाह का मतलब आसानी से समझ में आ जाये, फिर सिलसिल-ए-कलाम को "हस्बुकल्लाह" से मिलाते हूए "या अय्युहन् नबीयु हर्रिज़िल् मोमिनीन अलल् क़िताल" से उन्हीं मोमिनीन को ज़ाहिर किया गया है-जो हस्बुकल्लाहु के तहत साबित हो चुके हैं।

बहर हाल आयत "व मनित् तबअक मिनल् मोमिनीन" में लफ़्ज़ "मन्" से मुराद क़तअन् और यक़ीनन् (निश्चित रूप से) से इमाम महेदी अले० की ज़ाते अक़्दस है। जो किनाया और इशारे के तौर पर बयान की गई है।

तीसरी आयते क़ुरआनी

قُلْ اَيُّ شَيْءٍ اَكْبَرُ شَهَادَةً ۚ قُلِ اللّٰهُ ۚ شَهِيْدٌ بَيْنِيْ وَبَيْنَكُمْ ۚ وَاُوْحِيَ اِلَيَّ هٰذَا الْقُرْاٰنُ لِاُنْذِرَكُمْ بِهٖ وَمَنْۢ بَلَغَ ۚ

(अल् अन्आम : 19)

अनुवाद : "ऐ नबी! कह दो कि, अल्लाह से बढ़कर कौन शहादत देने वाला है? कह दो कि, अल्लाह मेरे और तुम्हारे दरमियान् शाहिद (साक्षी) है और यह क़ुरआन मेरे पास बज़रीये वही भेजा गया है। ता कि तुमको उस से डराऊं और वह शख़्स भी डराये-जिसके पास यह क़ुरआन पहुंचे।"

इस आयत के संबंध में मुफ़स्सिरीन ने-जो शाने नुज़ूल लिखा है, उसका ख़ुलासा यह है कि, "एक मर्तबा कुफ़्फ़ारे क़ुरेश ने आँहज़रत सल्ला० से कहा था कि, ऐ मुहम्मद सल्ला०! क्या ख़ुदा को तुम्हारे सिवा कोई रसूल नहीं मिला? तुम्हारी तो कोई भी तस्दीक़ नहीं करेगा। हमने अहले किताब से पूछ लिया कि तुम्हारी किताबौं में मुहम्मद सल्ला० का कोई ज़िक्र है? तो उन्होंने साफ़ कह दिया कि, हमारी किताबौं में मुहम्मद सल्ला० का ज़िक्र नहीं है।"

इसके अलावा हुमाम बिन ज़ैद बिन काब वग़ैरह ने कहा था कि, "ऐ मुहम्मद सल्ला०! तुम्हारे इल्म में ख़ुदा के सिवा और कोई माबूद इबादत के लायक नहीं है।" तो उसके जवाब में रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया कि वाक़िई (वस्तुत:) अल्लाह तआला के सिवा कोई माअबूद नहीं-जिसकी इबादत की जाये। मुझे अल्लाह तआला ने यही पैग़ाम दे कर भेजा है, जिसको मैं तुम लोगौं तक पहुंचा रहा हूँ। उसके सिलसिले में इर्शाद हुआ है कि, ऐ नबी सल्ला०! उनसे कह दो कि, ख़ुदा से बढ़कर

किस की शहादत हो सकती है। ख़ुदा ही मेरे और तुम्हारे दरमियान गवाह है और यह क़ुरआन मेरी तरफ़ वही किया गया है। ता कि मैं हाज़िर और ग़ाइब को-जिसके पास यह क़ुरआन पहुंचे, (उसे) डराऊं। (तफ़्सीर बयानुस् सुब्हान)

यह माने इस बुनियाद पर हैं कि, मुफ़स्सिरीन ने “व मन् बलग़” के “वाव” का अत्फ़ ज़मीर जमा मुज़क्कर मुख़ातिब पर डाला है-जो “लिउन्ज़िरकुम्” में है। जिसके माने यह है कि, ऐ अहले मक्का! यह क़ुरआन मेरी तरफ़ वही किया गया है। ता कि मैं तुमको डराऊं और उन लोगौं को भी-जो अक़्वामे अरब और अजम से दूर दराज़ के मुलकौं और शहरौं में रहते हैं।

“तफ़्सीर लवामिउल बयान” में बयान किया गया है कि, बलाग़े क़ुरआन की दो सूरतें है। यानि यह बलाग़ (सूचित करना) ब-एतिबार तमाम अल्फ़ाज़ व मआनी-ए-क़ुरआन के होगा या न होगा। अगर तमाम अल्फ़ाज़ और मआनी-ए-क़ुरआन के एतिबार से न हो, तो यह बात हर आमिर के लिये अम्र बिल माअरूफ़ करता है और हर नाही के लिये-जो बुरी बातौं से मना करता है, मुम्किन है और ऐसे अश्ख़ास का वुजूद यौमे क़ियामत तक पाया जा सकता है और यह माना हर शाहिद पर जो ग़ाइब की तब्लीग़ करता है और हर फ़क़ीह और वाइज़ पर-जो लोग़ौं को ख़्वाबे ग़फ़्लत से जगाता है, सादिक़ आयेंगे और यह लोग इस माना के लिहाज़ से मुबल्लिग़ यानि तब्लिग़ करने वाले कहलाते हैं। अगर क़ुरआन के तमाम अल्फ़ाज़ और मआनी का एतिबार किया जाये तो यह माने सिर्फ़ उसी शख़्स पर सादिक़ आ सकते हैं, जो क़ुरआन के तमाम हक़ाइक़ और (राज़) और दक़ाइक़ (बारीकियौं) को जानता हो और यह ज़ाहिर है कि

क़ुरआन के तमाम माने और असरार (रहस्य) का एहाता उस शख़्स के सिवा मुम्किन नहीं, जिस पर अल्लाह तआला वही भेजता हो और उसको तालीम देता हो और इस दर्जे पर उस शख़्स के सिवा जिस पर अल्लाह तआला का फ़ज़ल हो और वह रूहुल क़ुद्स के ज़रीए उसकी ताईद करे कोई भी फ़ाइज़ नहीं होता।

ख़ुदा जिसको क़ुरआन के जमीअ मआनी (सम्पूर्ण अर्थ) की तालीम देता है, वही तमाम हक़ाइक़े शरीअत से वाक़िफ़ होता है और ऐसा शख़्स ही नबी सल्ला० का वारिस होता है। जैसा कि इमाम ग़ज़ाली रहे० ने “एह्याउल उलूम” में बयान किया है।

“कोई आलिम उस वक़्त तक नबी सल्ला० का वारिस नहीं होता, जब तक वह तमाम मआनी-ए-शरीअत से मुत्तला (सूचित) न हो। यहाँ तक कि उसके और नबी सल्ला० के दरमियान सिर्फ़ एक दर्जे का फ़र्क़ बाक़ी रह जाता है। यही वह नबूवत का दर्जा है, जो वारिस और मूरिस के दरमियान फ़र्क़ को ज़ाहिर करता है।

वारिस की दो किस्में हैं। एक वारिस वह जो अहकामे शरीअत के बयान में ख़ता नहीं करता। वह इमामे मासूम होगा। जिसकी इत्तिबा उसके अक़्वाल और अफ़्आल में वाजिब है। दूसरा वारिस वह है, जो अहकामे शरीअत के बयान में कभी ख़ता करता है और कभी सवाब (सही)-वह आलिम मुज्तहिद होता है, जिसकी इत्तिबाअ आम आदमी और उस आलिम के लिये वाजिब है, जिसको इज्तिहाद का दर्जा हासिल न हो। उसके बाद वारिसे मासूम-अगर वह अल्लाह तआला की तरफ़ से दाअवत इल्लल्लाह की इजाज़त दिया गया हो, तो वह अल्लाह का ख़लीफा है। इस आयत में “मन् बलग़” का इशारा ऐसे वारिसे मासूम की तरफ़ हो

सकता है, जिसकी तालीम और तब्लीग़ रसूलुल्लाह की तालीम और तब्लीग़ के मिस्ल (समान) हो।

मुफ़स्सिरीन के नज़्दिक "लि उन्जिरकुम" के मुख़ातब ब-तरीक़े हस्र सिर्फ़ अहले मक्का हैं-जो क़रीने क़ियास नहीं, बल्कि उसका इशारा उन तमाम लोगौं की तरफ़ भी हो सकता है, जो नबी सल्ला० की ज़िन्दगी में मौजूद हों और आपके बाद क़ियामत तक आते रहें। क्योंकि आप सल्ला० काइनात (जगत) के तमाम लोगौं के लिये बशीर (शुभ सूचक) और नज़ीर (डराने वाले) हैं। जो बेअ्सत से ले कर क़ियामत तक आयें।

क़ुरआन शरीफ़ में इस क़िसम की ज़मीरे (सर्वनाम) मुतअद्दिद (अनेक) जगह आई है। वहाँ क़ियामत के दिन तक "तमाम लोग मुराद है" मसलन् :

- रोज़े तुम पर फ़र्ज़ किये गये हैं। (2:183)
- ऐ लोगो! मैं तुम सब के पास अल्लाह का रसूल हो कर आया हूँ। (7:158)
- तुम्हारे पास रसूल हक़ यानि क़ुरआन तुम्हारे रब की तरफ़ से ले कर आये हैं। (4:170)
- ऐ नबी! कह दो कि पैग़म्बर जो तुमको दें, ले लो और जिस से मना करें, बा'ज़ रहो। (59:7)

इन आयात में "अलैकुम" (तुम पर), "इलैकुम" (तुम्हारी तरफ़), "कुम" (तुम) के मुख़ातब (संबोधित) सिर्फ़ वही लोग नहीं हैं-जो रसूलुल्लाह सल्ला० के ज़माने में मौजूद थे। बल्कि क़ियामत तक आने वाले तमाम मुसलमान उसके मुख़ातब हैं।

जब यह साबित हो गया कि, "ता कि मैं तुमको डराऊं" का ख़िताब क़ियामत के दिन तक तमाम मुसलमानौं से मुतअल्लिक़ हो सकता है, तो उस सूरत में "व मन् बलग़" की आयत ज़ायद अज़् मक़सूद साबित होगी। क्योंकि तमाम क़ुरआन शरीफ़ रसूलुल्लाह सल्ला० पर नाज़िल हुआ है और हर आयत में "क़ुल् या मुहम्मद सल्ला०" का हुक्म हुआ है-जो महज़ूफ़ (छिपा हुआ) है और ख़ुदा आमिर (नेकी का हुक्म देने वाला) और नाही (बुराई से रोकने वाला) से कहीं भी मुख़ातिब नहीं है। अगर किसी आयत में मोमिनीन मुनादा (पुकारा हुआ) भी हो-जैसे या "अय्युहल्लज़ीन आमनू" तो यह ख़िताब भी नबी सल्ला० के माध्यम से होगा। क्योंकि नुज़ूले क़ुरआन इब्तदाअन् नबी सल्ला० पर हुआ है, न कि मोमिनीन पर। इसलिये "मन्" न आम है और न उसको आम ले कर आमिर और नाही मुराद लेना सही होगा।

अगर "व मन् बलग़" में "मन्" को ख़ास मानकर उस का अत्फ़ (संयोजक) "इला" की याये मुतकल्लिम पर डाला जाये तो "मन्" का इशारा वारिसे मासूम या महेदी अले० की तरफ़ होगा-जो ख़लीफ़तुल्लाह और मासूम हैं। जैसा कि हमने पहली आयत की तफ़्सीर में वज़ाहत की है। इस सूरत में यह आयत ज़ायद अज़् मक़सूद नहीं, बल्कि असल मक़्सूद साबित होगी और आयत की तक़दीर यह होगी

اُوْحِيَ اِلَيَّ ہٰذَا الْقُرْاٰنُ وَ اِلٰى مَنْ بَلَغَ

यानि यह क़ुरआन मेरी तरफ़ वही किया गया है और उस शख़्स की तरफ़ जिसको क़ुरआन पहुंचे।

अगर यह कहा जाये कि "मन्" से वारिसे मासूम या इमाम महेदी अले० लिये जायें, तो महेदी अले० को भी साहबे वही तस्लीम करना होगा

और यह भी मानना पड़ेगा कि, नबी सल्ला० के बाद वही मुन्क़ते नहीं हुई। उसका जवाब यह है कि, नबी सल्ला० के बाद बिला शक व शुब्हा नबुवत ख़त्म हो गई और वह वही भी मुन्क़ते हो गई-जो बज़री-ए-जिब्रइल अले० आती थी। लेकिन वह वही जो बतौर इल्क़ा हो या कलाम मिन वरा-ए-हिजाब कि क़िसम से हो, मुन्क़ते नहीं हुवी। बल्कि क़ियामत के दिन तक क़ायम है और रहेगी।

असल यह है कि, वही अल्लाह का ख़िताब (संबोधन) है, जिसकी तीन क़िस्में है। एक वह क़िसम है-जिसको मुत्लक़ वही कहते हैं। वही की दूसरी क़िसम वह है-जिसमें अल्लाह का कलाम मिन वराए हिजाब (परदे के पीछे से) होता है। वही की तीसरी क़िसम वह है-जो फ़रिश्ते के माध्यम से हो, जैसा कि आयत

وَمَا كَانَ لِبَشَرٍ اَنْ يُّكَلِّمَهُ اللّٰهُ اِلَّا وَحْيًا اَوْ مِنْ وَّرَآئِ حِجَابٍ اَوْ يُرْسِلَ رَسُوْلًا فَيُوْحِيَ بِاِذْنِهٖ
مَا يَشَآءُ ۝

(अश-शूरा : 51)

(यानि किसी आदमी के लिये मुम्किन नहीं कि, ख़ुदा उससे बात करे। मगर इल्हाम के ज़रीए से या परदे के पीछे से या कोई फ़रिश्ता भेज दे, तो वह ख़ुदा के हुक्म से है-जो ख़ुदा इल्क़ा करे) से ज़ाहिर है। चूंकि नबी सल्ला० ख़ातिमुल अम्बिया है और हदीस “ला नबी बाअदी” की बिना पर आपके बाद कोई नबी नहीं आ सकता। इसलिये वह वही-जो जिब्रईल अले० के माध्यम से आती थी, मुन्क़ते (समाप्त) हो गई। लेकिन पहली और दूसरी क़िसम की वही क़ियामत के दिन तक मुन्क़ते नहीं हो सकती। हदीस “ला वही बाअदी” मुहद्दिसीन के नज़दीक बातिल है।

मुल्ला अली क़ारी ने “रिसालतुल महेदी” में उसके बातिल होने का इशारा ज़ाहिर किया है।

जब यह साबित हो गया कि पहली और दूसरी क़िसम की वही मुन्क़ते नहीं है और यह वही सिद्दीक़ीन और औलिया अल्लाह को भी हासिल हो सकती है। इसलिये “व मन् बलग़ इलैहिल् क़ुरआन” (और जिसको यह क़ुरआन पहुंचे) से मुराद-जो वारिसे मासूम या महेदी अले० हैं, आप पर यह दोनों क़िसम की वही नाजिल हो सकती है। शेख़ अकबर मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी रहे० ने “फ़ुतूहात” के बाब 366 में वारिसे मासूम से मुराद महेदी अले० की ज़ात ली है और आपको मुल्हिक़ बिल अम्बिया भी कहा है। इसलिये ज़ेरे बहस आयत में “व मन् बलग़ इलैहिल क़ुरआन” से मुराद क़तअन्, और यक़ीनन् (निश्चित) इमाम महेदी अले० की ज़ात है, दूसरा कोई नहीं।

चौथी आयते क़ुरआनी

اَفَمَنْ كَانَ عَلٰي بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّهٖ وَيَتْلُوْهُ شَاهِدٌ مِّنْهُ وَمِنْ قَبْلِهٖ كِتٰبُ مُوْسٰٓى اِمَامًا وَّرَحْمَةً ۭ

اُولٰۗىِٕكَ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ ۭ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِهٖ مِنَ الْاَحْزَابِ فَالنَّارُ مَوْعِدُهٗ ۚ فَلَا تَكُ فِيْ مِرْيَةٍ مِّنْهُ ۤ

اِنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿١٧﴾

(सुरह हुद : 17)

अनुवाद : “क्या वह शख़्स जो अपने रब की तरफ़ से रोशन दलील पर हो और उसके पीछे ख़ुदा की तरफ़ से गवाह भी आये और इसके पहले मूसा की किताब (तौरात) इमाम और रहमत बनकर आई हो, तो वह लोग उस पर ईमान लायेंगे? और जो दूसरे गिरोहों में से इसका इन्कार करे तो उसके लिये जिस जगह का वादा है, वह (जहन्नम की)

आग है। तुम इसके बारे में शक और शुब्हा में न रहो। बेशक वह तुम्हारे रब की तरफ़ से बरहक़ है, लेकिन अक्सर लोग ईमान नहीं लायेंगे।”

इस आयत में लफ़्ज़ “मन्” अगरचे आम भी होता है और ख़ास भी, लेकिन इस आयत में ख़ास और बतौर शर्त आया है। जिसकी जज़ा “फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हू...” (आख़िर तक) है।

“बय्यिनह” के लग़वी माना (शाब्दिक अर्थ) दलीले रोशन (व्यक्त तर्क) और सुबूते ज़ाहिर के है। उसकी जमा “बय्यिनात” आती है। “बय्यिनह” से मुराद वह वाज़ेह दलील है-जो अल्लाह तआला अपने पैग़म्बरौं को उनकी सदाक़त (सत्यता) ज़ाहिर करने के लिये अता करता है। क़ुरआन में शब्द “बय्यिनह” के बाद “मिर् रब्बी, मिर् रब्बिकुम” आये तो वहाँ अम्बिया अले० मुराद होते हैं। जैसे...

“क़ुल् इन्नी अला बय्यिनतिम् मिर् रब्बी” (6:57) ऐ मुहम्मद! कह दो कि मैं अपने पर्वरदिगार की तरफ़ से बय्यिनह पर हूँ।

“क़द जेतुकुम बि बय्यिनतिम् मिर रब्बिकुम” (7:105) मैं तुम्हारे पास ख़ुदा की तरफ़ से बय्यिनह ले कर आया हूँ।

ज़ेरे बहस आयत में “बय्यिनह” के बाद “मिर रब्बिही” के अल्फ़ाज़ आये है। इस से कौन शख़्स मुराद है? आइंदा वाज़ेह होगा।

“यत्लूहू” में “यत्लू’ तिलावत से मुश्तक़ (व्यत्पन्न शब्द) नहीं है। बल्कि “तिल्व” से मुश्तक़ है। जिसके माने पस या पीछे के हैं।

“मकामाते हरीरी” में जहाँ लेखक ने “मक़ामाते बदीई” के लेखक बदीउज़् ज़माँ की तारीफ़ की है, लिखा है...

اتلو فيها تلو البديع وان لم يدرک الطالع شاوالضليع

(यानि मैं इस किताब में बदी उज़् ज़माँ की पैरवी करूंगा। अगरचे लंगड़ा घोड़ा क़वी (बलवान) की रफ़्तार को नहीं पहुंचता)। इस इबारत में "अत्लू तिल्व अल बदीअ" के माने यह हैं कि, मैं बदी उज़् ज़माँ की पैरवी करूंगा। चूंकि इस आयत में "यत्लूहू शाहिदुम् मिन्हू" के बाद "व मिन् क़ब्लिही किताबू मूसा" आया है। इसलिये पीछे आने का तर्जुमा सही है।

"शाहिद" के माने गवाह या गवाही देने वाले के हैं। "ऊलाइका यूमिनून बिही" में "ऊलाइका" से उस मामूर मिनल्लाह के ज़माने के लोग मुराद हैं-जो लफ़्ज़ "मन्" का मिस्दाक़ (चरितार्थ) है और यह जुम्ला बतौर इस्तेफ़हाम इन्कारी है, क्या वह लोग ईमान लायेंगे, यानि नहीं लायेंगे? "अहज़ाब" की जमा हिज़्ब-जिसके माने गुरोह (जनसमूह) हैं।

"मिर्यतिन्" के माने शक व शुब्हा (संदेह) के हैं। इस आयत के संबंध में मुफ़स्सिरीन के मुख़्तलिफ़ अक़्वाल हैं। बा'ज़ ने लफ़्ज़ "मन्" से रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ाते अक़दस मुराद ली है। बा'ज़ कहते हैं कि लफ़्ज़ "मन्" आम है और बा'ज़ कहते हैं कि "मन्" का लफ़्ज़ कुल्ली मन्तिक़ी है। इसलिये उसका मिस्दाक़ हर मोमिन मुख़लिस हो सकता है। इसी तरह "शाहिद" के माने में भी इख़्तिलाफ़ है। हज़रत इब्ने अब्बास, मुजाहिद, अक्रमा, अबूल आलिया, ज़हाक, इब्राहीम नख़ई और सिद्दी ने "शाहिद" से मुराद जिब्रईल अले० ली है। हज़रत अली रज़ी० और हसन बसरी रहे० की रिवायत में इस से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० हैं। इब्ने कसीर ने उनकी रिवायात को ज़ईफ़ क़रार दिया है और "शाहिद" से मुराद क़ुरआन शरीफ़ बयान किया है और उसको क़ाबिले तरजीह (पसंद के योग्य) क़रार दिया है। क्योंकि जब तौरात पहले की किताब है, तो क़ुरआन शरीफ़ बाद की किताब होनी चाहिये-जिस पर "यत्लू" का लफ़्ज़

जो “तिल्व” से मुश्तक़ है दलीले मुबीन (स्पष्ट तर्क) है, ता कि तक़ाबुल सही साबित हो। तफ़्सीर बयानुस् सुब्हान में इसी तरह है और यही तफ़्सीर बहुत सही है।

अब हम इस आयत की निस्बत मुख़्तलिफ़ अक़्वाल की तश्रीह करके बतायेंगे, ता कि सही क़ौल वाज़ेह हो जाये।

अगर लफ़्ज़ “मन्” से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ाते अक़्दस ली जाये तो आयत में लफ़्ज़ “मन्” के साथ कोई ऐसा क़रीना (क्रम) नहीं है, जिस से आपकी ज़ाते अक़्दस का तअय्युन (निश्चय) हो, वर्ना मुफ़स्सिरीन के अक़्वाल मुख़्तलिफ़ न होते।

अक्सर आयात ऐसी मिलेंगी-जिनसे पैग़म्बरौं का तअय्युन साबित होता है। मसलन् قُلْ اِنِّىْ عَلٰي بَيِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّيْ यानि, ऐ मुहम्मद सल्ला०! कह दो कि मैं अपने रब की तरफ़ से बय्यिनह पर हूँ। एक और मक़ाम पर ख़ुदा ने रसूलुल्लाह सल्ला० से मुख़ातिब हो कर फ़र्माया है, “हमने मुहम्मद सल्ला० पर रोशन दलायल नाज़िल किये हैं।” नूह अले० ने अपने तअय्युन के साथ फ़र्माया है, قَالَ يٰقَوْمِ اِنْ كُنْتُ عَلٰي بَيِّنَةٍ यानि “ऐ क़ौम! देखो तो सही, अगर मैं अपने रब की तरफ़ से बय्यिनह पर हूँ।” यही अल्फ़ाज़ सालेह अले० ने फ़र्माये हैं और ख़ुदा तआला ने मूसा अले० के तअय्युन के साथ फ़र्माया है لَقَدْ جَآءَكُمْ مُّوْسٰى بِالْبَيِّنٰتِ (2:92) यानि मूसा० अले० तुम्हारे पास रोशन दलायल के साथ आये हैं।

आयत ज़ेरे बहस में “मन्” से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० ही फ़र्ज़ किये जायें, तो आयत “फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हु” में “मिन्हु” की ज़मीर वाहिद ग़ाइब या तो लफ़्ज़ “मन्” की तरफ़ लौटेगी-जिससे रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ाते अक़्दस मुराद ली गई है, या “शाहिद” की

तरफ़-जिससे क़ुरआन शरीफ़ मुराद है, या जिब्रईल अले० की तरफ़। "मन्" की तरफ़ राजेअ होने (लौटने) की सूरत में माने यह होंगे कि, ऐ नबी सल्ला०! "मन्" पर शक व शुब्हा न करो। अगर क़ुरआन की तरफ़ राजेअ हो या जिब्रईल अले० की तरफ़, तो माने यह होंगे कि,

"आप क़ुरआन शरीफ़ या जिब्रईल अले० पर शक व शुब्हा न करो। क्योंकि वह ख़ुदा की तरफ़ से बरहक़ है। इस माना के ग़लत होने का अन्दाज़ा हर मामूली अक़्ल वाला भी कर सकता है। क्योंकि नबी सल्ला० को न कभी अपनी ज़ाते अक़दस पर शुब्हा हुआ है, न क़ुरआन शरीफ़ और न जिब्राईल अले० पर। जबकि "ज़ालिकल् किताबु ला रैबा फ़ीहि" की आयत आप पर नाज़िल हुई है और जिब्रईल अले० ख़ुद आपके पास आते-ज़ाते और हामिले वही थे।

जो लोग "मन्" से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ाते अक़दस बयान करते हैं, वह "फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हु" में यह तावील करते हैं कि, अगरचे "फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हु" के मुख़ातब रसूलुल्लाह सल्ला० है, मगर तबअन् उससे मुराद उम्मते मुहम्मदिया है। यानि उम्मत को हुक्म हो रहा है कि, ज़ाते रिसालत मआब सल्ला० या क़ुरआन या जिब्रईल अले० पर शुब्हा न करो।

यह तावील भी इस वजह से सही नहीं है कि "फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हु" में कोई ऐसा क़रीना ही नहीं है, जिससे उम्मते मुहम्मदिया मुराद हो। अलावा इसके उम्मत को ज़ाते रिसालत मआब सल्ला० या क़ुरआन पर कैसे शुब्हा हो सकता है! या उसको जिब्रईल अले० के हामिले वही होने से कैसे इन्कार हो सकता है! शुब्हा की सूरत में वह उम्मत ही उम्मते मुस्लिम नहीं रह सकती। इस तक़रीर से ज़ाहिर है कि, "अफ़मन्

काना” मैं “मन्” से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ाते अक़दस नहीं ली जा सकती।

इसी तरह “मन्” को आम ले कर आम मोमिनीन मुराद लिये जायें तो فَلَا تَكُ فِي مِرْيَةٍ مِّنْهُ اِنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ की आयत में مِّنْهُ और اِنَّهُ की ज़मीरें- जो वाहिद ग़ायब की है, ग़ैर मुताबिक़ होंगी। यह माने उस सूरत में दुरुस्त होंगे। जबकि आयत فَلَا تَكُ فِي مِرْيَةٍ مِّنْهُم و اِنَّهُم الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ हो। अलावा इसके नबी सल्ला० को अपने मोमिनीन से शुब्हा करना भी बेमहल होगा। अगर लफ़्ज़ “मन्” को कुल्ली मन्तिक़ी मानकर उसका मिस्दाक़ हर मोमिन मुख़लिस को क़रार दिया जाये, तो तीन वुजूह से यह भी क़रीने क़ियास (विश्वसनीय) नहीं। पहला यह कि “फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हु” के मुख़ातब रसूलुल्लाह सल्ला० है। “मिन्हु” की ज़मीर या तो राजेअ होगी। “मन्” की तरफ़-जिस से हर मोमिन मुख़लिस मुराद है, या “शाहिद” की तरफ़ राजेअ होगी-जिस से मुराद क़ुरआन शरीफ़ है, या जिब्रईल अले० हैं। “मन्” की तरफ़ राजेअ हो तो यह माने होंगे कि, ऐ नबी! हर मोमिन मुख़लिस की ज़ात पर शुब्हा न करो और अगर “मिन्हु” की ज़मीर क़ुरआन शरीफ़ या जिब्रईल अले० की तरफ़ राजेअ हो तो आयत के माने यह होंगे कि, ऐ नबी! क़ुरआन पर या जिब्रईल अले० पर शुब्हा न करो। क्योंकि हर मोमिन मुख़लिस या क़ुरआन या जिब्रईल ख़ुदा की तरफ़ से बरहक़ है। इस माने का ग़लत होना भी साफ़ ज़ाहिर है। क्योंकि नबी सल्ला० को हर मोमिन मुख़लिस पर शुब्हा करने की ज़रूरत ही नहीं। जबकि वह मोमिन मुख़लिस आप पर ईमान लाया और मुख़लिस (निष्कपट) है। इसी तरह क़ुरआन या जिब्रईल अले० पर भी आप को कोई शुब्हा नहीं हो सकता। जबकि क़ुरआन ख़ुदा की तरफ़ से जिब्राईल अले० के माध्यम से नाज़िल हुआ है।

दूसरा यह कि हर मोमिन मुख़लिस पर अल्फ़ाज़

يَتْلُوْهُ شَاہِدٌ مِّنْہُ وَمِنْ قَبْلِہٖ کِتٰبُ مُوْسٰۤى اِمَامًا وَّرَحْمَۃً ؕ اُولٰٓئِکَ یُؤْمِنُوْنَ بِہٖ ؕ وَمَنْ یَّکْفُرْ بِہٖ مِنَ الْاَحْزَابِ فَالنَّارُ مَوْعِدُہٗ ۚ

सादिक़ आयें तो उस से हर मोमिन मुख़लिस को मामूर मिनल्लाह मानना पड़ेगा और उसकी शान पैग़म्बराना साबित होगी। जिसका मानना ईमान और उसका इन्कार कुफ़्र हो।

तीसरा यह कि “बय्यिनह” का लफ़्ज़ “मिर रब्बिहि” के साथ पैग़म्बरौं के सिवा दूसरों के लिये नहीं आता। चूंकि इन अल्फ़ाज़ से मामूर मिनल्लाह की शान ज़ाहिर हो रही है। इसलिये “मन्” से मुराद हर मोमिन मुख़लिस नहीं हो सकता।

अगरचे शाहिद से मुराद क़ुरआन शरीफ़ है-जो तौरात के मुक़ाबिल में मज़्कूर है। लेकिन उस के बर-अक्स रिसालत मआब सल्ला० की ज़ाते अक़दस मुराद ली जाये और लफ़्ज़ “मन्” से हर मोमिन मुख़लिस, तो “फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हु” (तुम इस से शक व शुब्हा में न रहो) का एतिराज़ बाक़ी रहेगा। हक़ीक़त यह है कि, न तो नबी सल्ला० को अपनी ज़ात पर शुब्हा हो सकता है, न हर मोमिन मुख़लिस पर। जबकि वह आप पर ईमान ला चुका हो।

जब यह साबित हो चुका कि, इस आयत “अफ़मन् काना” में लफ़्ज़ “मन्” से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ाते अक़दस नहीं हो सकती, अलावा इसके आम मोमिनीन और हर मोमिन मुख़लिस भी मुराद नहीं है, तो एक ऐसी ज़ाते अक़दस यक़ीनन् मुराद हो सकती है जिसकी शान में अल्फ़ाज़

يَتْلُوْهُ شَاهِدٌ مِّنْهُ وَمِنْ قَبْلِهٖ كِتٰبُ مُوْسٰى اِمَامًا وَّرَحْمَةً اُولٰٓئِكَ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِهٖ مِنَ الْاَحْزَابِ فَالنَّارُ مَوْعِدُهٗ

सादिक़ आयें और वह ख़ुद ख़लीफ़तुल्लाह या मामूर मिनल्लाह हो। जिसका मानना ईमान और उसका इन्कार कुफ़्र हो, वह या तो महेदी अले० हो सकते हैं या ईसा अले०। क्योंकि रसूलुल्लाह सल्ला० ने अलग-अलग ज़मानौं में इन हर दो मुक़द्दस हस्तियों के आने की ख़बर दी है। जैसा कि इर्शाद हुआ है...

كيف تهلك امة انا فى اولها و عيسٰى فى آخرها و المهدى من اهل بيتي في وسطها

यानि वह उम्मत कैसे हलाक हो सकती है, जिसके अव्वल मैं हूँ। ईसा अले० उसके आख़िर में और महेदी अले० मेरे अहले बैत से, उसके वस्त में हैं। (मिश्कात शरीफ़)

चूंकि ईसा अले० पहले से नबी हैं और अपनी उम्मत के लिये बय्यिनह साबित हो चुके हैं। इसलिये दुबारा इस आयत ज़ेरे बहस में "मन्" से मुराद ईसा अले० नहीं हो सकते। साबित हुआ कि "मन्" ख़ास है और उस से मुराद इमाम महेदी अले० की ज़ाते अक़्दस है और आपका ख़लीफ़तुल्लाह होना हदीसे सोबान रज़ी० से साबित है।

عن ثوبانؓ قال قال رسول الله صلى الله عليه و سلم يقتتل عند كنز كم ثلاثه كلهم ابن خليفة لا يصير الى احد منهم ثم تطلع الر ايات السود من قبل المشرق فيقتلو نكم قتلاً لم يقتله قوم ثم يجئى خليفة الله المهدى فاذاسمعتم به فبا يعوه ولو جبواً على الثليج

सोबान रज़ी० कहते हैं कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया है कि, तुम्हारे कंज़ यानि ख़िलाफ़त के लिये तीन शख़्स झगड़ा करेंगे। वह तमाम ख़लीफ़ा के बेटे होंगे। ख़िलाफ़त किसी को नहीं मिलेगी, कि सियाह झंडे पूरब की तरफ़ से निकलेंगे और तुमको यानि मुसलमानौं को ऐसा क़त्ल

करेंगे कि कोई क़ौम इस तरह क़त्ल न की होगी। फिर अल्लाह के ख़लीफ़ा महेदी आयेंगे। तुम उनको सुनो तो उनके पास आवो। उनसे बैअत करो। अगरचे बर्फ़ पर से रेंगते जाना पड़े।

इसी तरह एक और हदीस हज़रत इब्ने उमर रज़ी० से भी रिवायत की गई है। जिसको अबू शैबा ने लिखा हैं...

इब्ने उमर रज़ी० कहते हैं कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया है, कि महेदी इस हालत में ज़हूर करेंगे कि फ़रिश्ता आपके ऊपर से निदा करेगा कि, यह महेदी ख़लीफ़तुल्लाह हैं, तुम इन से बैअत करो।

इन दोनों रिवायतों से साबित है कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने महेदी अले० को ख़लीफ़तुल्लाह फ़र्माया है। अब इमाम महेदी अले० को आयत “अफ़मन् काना अला बय्यिनह” में लफ़्ज़ “मन्” का मिस्दाक़ ठहराते हूए और आयत “फ़ला तकु फ़ी मिर्यतिम् मिन्हु” में ज़मीर वाहिद ग़ाइब का मर्जा लफ़्ज़ “मन्” को क़रार देते हूए पूरी आयत का मतलब यह है।

जो शख़्स यानि महेदी अले० अपने पर्वरदिगार की तरफ़ से रोशन दलील पर हो और क़ुरआन शरीफ़ आपकी बेअ्सत का गवाह आपके पीछे आ चुका और आपके पहले किताबे मूसा अले० इमाम और रहमत बनकर आई हो, तो क्या वह लोग-जो आपके ज़माने में होंगे, आपको तस्लीम करेंगे? जो लोग मुख़्तलिफ़ जमाअतौं से आपका इन्कार करें, तो दोज़ख़ उनकी वादा गाह बनेगी। ऐ नबी सल्ला०! आप महेदी की निस्बत शुब्हा न करो। क्योंकि वह आपके रब की तरफ़ से यक़ीनन् बरहक़ हैं। लेकिन अक्सर लोग ईमान नहीं लायेंगे।

(चेतावनी)-अक्सर लोगौं का ईमान ना लाना कोई नई बात नहीं है। बहुत सारे पैग़म्बरौं की उम्मत की तेदाद बहुत कलील थी, तो क्या इससे उनके पैग़म्बर होने की तकज़ीब (झुटलाना) होगी? हरगिज़ नहीं।

मूसा अले० की किताब का ज़िक्र इस बिना पर है कि, अम्बिया-ए-साबिक़ीन की किताबौं में भी महेदी अले० का ज़िक्र आया है। जैसा कि काअब अल अहबार ने बयान किया है,

انّی اجد المهدی مکتو با فی اسفارالانبیاء

यानि "मैं महेदी का ज़िक्र अम्बिया की किताबौं में पाता हूँ।"

"तफ़्सीरे तावीलात" में ईसा अले० का यह क़ौल नक़ल किया गया है...

قال عیسٰی نحن تاتیکم بالتنزیل و اما التاویل فسیاتی به المهدی فی اخر الذمان

ईसा अले० ने फ़र्माया है, "हम पैग़म्बर तुम्हारे पास तन्ज़ील ले कर आते है। लेकिन तावील उसको महेदी आख़िर ज़माने में लायेंगे।"

पाँचवीं आयते क़ुरआनी

قُلْ هٰذِهٖ سَبِیْلِیْٓ اَدْعُوْٓا اِلَى اللّٰهِ ۣ عَلٰي بَصِيْرَةٍ اَنَا وَمَنِ اتَّبَعَنِيْ ۭ

(सूरह यूसुफ : 108)

अनुवाद : कह दो, ऐ मुहम्मद! यह मेरा तरीक़ा है। मैं अल्लाह की तरफ़ बसीरत पर बुलाता हूँ और वह शख़्स भी बुलाता है-जो मेरा ताबे है।

यह आयत सूरह यूसुफ़ के आख़िरी हिस्से में आई है। पूरा क़िस्सा बयान करने के बाद अल्लाह तआला का इर्शाद होता है, "हज़रत यूसुफ़

के वाकिआत ग़ैब की ख़बरें हैं। जिनको हम तुम्हारी तरफ़ वही करते हैं।” (आले इमरान : 44)

इस आयत से साबित किया गया है कि, मुहम्मद सल्ला० ने ना कोई तारीख़ी किताब पढ़ी है और ना ही लिखना पढ़ना जानते थे, कि तौरात वग़ैरह पढ़कर समझ सकें और ना मुहम्मद सल्ला० के ज़माने में हज़रत यूसुफ़ अले० के रिश्तेदार मौजूद थे। जिनसे आपको वाकिआत मालूम हूए हों। वही के सिवा कोई ज़रीआ नहीं था कि मुहम्मद सल्ला० को दो हज़ार साल पहले के सही-सही वाक़िआत मालूम हो। उसके बाद चंद आयतें हज़रत सल्ला० की तसल्ली के लिये बयान की गई हैं। जिनका मतलब यह है कि, ऐ मुहम्मद सल्ला०! आप कैसी ही ख्वाहिश करें और कैसे ही मोजिज़ात दिखायें, मगर वह आप पर ना ईमान लाये हैं और ना लायेंगे और क़ुरआन शरीफ़ को भी ख़ुदा का कलाम तस्लीम नहीं करेंगे। वह आपको मानें या ना मानें-आपका काम तब्लीग़ है। हमारे अहकाम उन तक पहुंचा दो और कह दो कि, यही मेरा तरीक़-ए-तब्लीग़ हैं। मैं लोगौं को अल्लाह की तरफ़ बसीरत पर बुलाता हूँ और वह शख़्स भी बुलाता है-जो मेरा ताबे है।

इस आयत में “क़ुल” बमाने “क़ुल या मुहम्मद” है। यानि, ऐ मुहम्मद सल्ला०! कह दो। “सबील” से मुराद तरीक़-ए-तब्लीग़ है। “बसीरत” के माने बीनाइ-ए-दिल (हार्दिक दृष्टि) या अक़्ल और शऊर के हैं। इस आयत में लफ़्ज़ “मन्” क़ाबिले बहस है कि, वह आम (सामान्य) होगा या ख़ास (विशिष्ट)। अक्सर मुफ़स्सिरीन ने उसको आम तस्लीम किया है।जब लफ़्ज़ “मन्” से किसी ख़ास शख़्स को मख़्सूस नहीं किया गया है, तो आयत का मतलब यह होगा कि, हर वह शख़्स-चाहे वह सहाबी

हो या ताबई, वली हो या सालिक, आलिम हो या आमी-जो भी मुहम्मद सल्ला० की इत्तिबा करता है, वह मुहम्मद सल्ला० की तरह दाई इलल्लाह और बसीरत की दावत देने वाला होगा-जो सही नहीं है।

सही यह है कि रसूलुल्लाह सल्ला० की तरह जो शख़्स ख़लीफ़तुल्लाह होगा वही दाई इलल्लाह हो सकता है। इमाम महेदी और ईसा अलैहिमुस्सलाम के सिवा उम्मते मुहम्मदिया में कोई भी ख़लीफ़तुल्लाह नहीं है। इन दोनों ख़लीफ़तुल्लाह के सिवा उम्मत का हर फ़र्द रसूलुल्लाह सल्ला० की तब्लीग़ का मुमिद्दो मुआविन (सहायक) हो सकता है, ना कि दाई इलल्लाह।

दाई इलल्लाह और दाई इला अहकामिल्लाह में बहुत बड़ा फ़र्क़ है। जो लोग ख़लीफ़तुल्लाह हो, वही दाई इलल्लाह हो सकते हैं। यानि अल्लाह की तरफ़ बुलाने वाले। उनके सिवा बाक़ी तमाम लोग दाई इला अहकामिल्लाह हो सकते हैं। यानि अल्लाह के अहकाम की ताअमील की तरफ़ बुलाने वाले।

इस आयत में “मन्” से मुराद वही ज़ाते अक़्दस हो सकती है-जो रसूलुल्लाह सल्ला० की तरह दाई इलल्लाह और मामूर मिनल्लाह (अल्लाह की और से आदिष्ट और नियुक्त हो।)

इल्मे बयान की रू से लफ़्ज़ “मन्” आम हो कर भी फ़र्दे कामिल की तरफ़ राजेअ हो सकता है। अलावा इसके क़वाइदे नह्व की रू से “अना” और “मन्” जो माअतूफ़ और माअतूफ़ अलैहि हैं, दोनों का एक हुक्म में होना ज़रूरी है। क्योंकि अत्फ़ बिल्हर्फ़ की तारीफ़ यूँ की जाती है कि, “अत्फ़ बिल्हर्फ़ ऐसा ताबे है कि उसकी तरफ़ वही चीज़ निस्बत की

जायेगी-जो उसके मत्बूअ की तरफ़ निस्बत की गई हो और दोनों एक ही निस्बत से मन्सूब होंगे।"

इस से साबित है कि इस आयत में अत्फ़ बिल्हर्फ़ इस बात का मुक़्तज़ी (ज़रूरी) है कि, ताबे और मत्बूअ की दावत एक ही मर्तबे की हो।

हज़रत शेख़ मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी रहे० "फ़ुतूहात" के बाब 366 में इसी आयत की तफ़्सीर में तहरीर फ़र्माते हैं, "अल्लाह तआला नबी सल्ला० को यह कहने का हुक्म दिया है कि, कहो मैं अल्लाह की तरफ़ बसीरत पर बुलाता हूँ और मेरा ताबे भी बुलाता है। पस, महेदी आपके ताबईन से है और जिस तरह रसूलुल्लाह सल्ला० से अल्लाह की तरफ़ बुलाने में ख़ता नहीं होगी, उसी तरह आपके ताबे से भी ख़ता नहीं होगी। क्योंकि महेदी आपके नक़्शे क़दम पर चलते हैं। हदीस में महेदी का यही वस्फ़ (गुण) वारिद है कि, "रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया है कि, महेदी मेरे नक़्शे क़दम (पद् चिन्ह) पर चलेंगे और ख़ता नहीं करेंगे। दावत इलल्लाह में आपकी मासूमियत (प्राकृतिक निष्पाप होने) का सुबूत यही है।"

इस तफ़्सीर में अगरचे हज़रत शेख़ अकबर रहे० ने महेदी की निस्बत "मिम्मनित् तबअहु" बताया है, यानि उन लोगौं में जो रसूलुल्लाह सल्ला० की इत्तिबा करेंगे। लेकिन ग़ैर मुख़्ती (निष्पाप) होने कि सिफ़त-जो रसूलुल्लाह सल्ला० से मख़्सूस है, उसी सिफ़त को महेदी के लिये साबित फ़र्माया है। इससे साबित है कि दूसरे ताबईन के मुक़ाबिल महेदी अले० ही ऐसे ताबे हैं-जो दावत इलल्लाह में ग़ैर मुख़्ती (निष्पाप) है। इसलिये "मनित् तबअनी" में "मन्" का इशारा ख़ास तौर पर महेदी

अले० ही की तरफ़ हो सकता है। वर्ना मुख़्ती (ख़ता करने वाले) की दावत इलल्लाह ख़ता से ख़ाली न होगी।

इसके अलावा शेख़े अकबर रहे० ने “फ़ुतूहात” के बाब में यह भी बयान किया है कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने सिवाय इमाम महेदी के किसी और इमाम के लिये “यक़्फ़ू असरी वला युख़्ती” (मेरे नक़्शे कदम पर चलेंगे और ख़ता नहीं करेंगे) नहीं फ़र्माया। असल इबारत यह है...

ما نص رسول اللہ صلعم علی امام من ایمه الدین یکون بعده یرثه و یقفو اثره لا یخطی الا المهدی خاصةً فقد شهد بعصمته فی احکامه شهدالدلیل العقلی بعصمه رسول اللہ (ایضاً) قد اخبر علیه السلام عن المهدی انه لا یخطی وجعله ملحقا بالانبیاء۔

अनुवाद : रसूलुल्लाह सल्ला० से सिवाय महेदी के अइम्म-ए-दीन से किसी इमाम के लिये कोई नस् (स्पष्ट आदेश) जारी नहीं हुवी कि वह रसूलुल्लाह सल्ला० के बाद आपका वारिस और आपके निशाने क़दम की पैरवी करने वाला, ख़ता न करने वाला होगा और रसूलुल्लाह सल्ला० ने महेदी को अपने अहकाम में मासूम होने की गवाही दी है। जैसा कि दलीले अक़्ली रसूलुल्लाह सल्ला० के मासूम होने की गवाह है।

रसूलुल्लाह सल्ला० ने महेदी की निस्बत मासूम होने की ख़बर दी है और आपको मुल्हिक़ बिल अम्बिया ठहराया है।

इसका ख़ुलासा यह है कि महेदी अले० ही एक ऐसे इमाम हैं-जो रसूलुल्लाह सल्ला० के वारिस, मासूम अनिल ख़ता और मुल्हिक़ बिल अम्बिया हैं। इन वुजूह से इस आयत में लफ़्ज़ “मन्” से मुराद सिर्फ़ महेदी अले०. ही हो सकते है। कोई दूसरा नहीं।

इस आयत में लफ़्ज़ “मन्” से मुराद कौन है! ज़ाहिर नहीं किया गया। उसकी मिसाल ठीक उस पेशीन गोई के जैसी है-जो हज़रत याह्या

अले० ने बा'ज़ काहिनौं और यहूदियौं के दरयाफ़्त करने पर फ़र्माया था कि, "मैं ना ईसा हूँ, ना इल्यास। बल्कि मैं उस शख़्स की आवाज़ हूँ-जो जंगल में पुकारता है कि, ख़ुदा का रास्ता सीधा करो।" (ख़ुत्बाते अहमदिया)

इस बशारत में अगरचे तीसरे नबी का नाम नहीं बताया गया है। लेकिन उसकी मिसाल ऐसी है, जैसा कि हम आँहज़रत कहकर नबी सल्ला० मुराद लेते हैं। उसी तरह ख़ुदा और रसूलुल्लाह सल्ला० और अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० के पास महेदी मुतआरिफ़ (परिचित) थे और महेदी अले० की ज़ात मुऐयन (निश्चित) भी। इसलिये मुब्हम (अस्पष्ट) ख़बर दी गई। जैसा कि बशारतौं का आम तरीक़ा है। यानि वह जो मेरा ताबे है, वह भी लोगौं को बसीरत पर बुलाने वाला है।

चूंकि रसूलुल्लाह सल्ला० ने अपने बाद दो शख़्सौं के आने की ख़बर दी है। एक महेदी अले० दूसरे ईसा अले०। इसलिये इम्कान इसका भी है कि, लफ़्ज़ "मन्" से मुराद ईसा अले० हों।

चूंकि रसूलुल्लाह सल्ला० ने महेदी अले० की निस्बत फ़र्माया है, "अलमहेदीयु मिन्नी यक्फ़ू असरी वला मुख़्ती" (यानि महेदी मुझसे हैं। वह मेरे क़दम बकदम चलेंगे। ख़ता नहीं करेंगे।) यह बशारत "मनित् तबअनी" की तफ़्सीर कर रही है। अलावा इसके यह बशारत इमाम महेदी अले० के सिवा किसी और इमाम के लिये नहीं दी गई है। जैसा कि शेख़े अकबर रहे० ने सराहत फ़र्माई है। अब शेख़े अकबर रहे० से बढ़कर कौन है? जिस की तावील सही हो। आप ने ख़ुद ईसा अले० का कोई तज़करा तक नहीं फ़र्माया। इसलिये आयत में "मन्" से मुराद महेदी अले० ही हो सकते हैं।

इस बहस के क़त-ए-नज़र “बसीरत” के आ’ला मफ़्हूम का एतिबार किया जाये तो नबी सल्ला० के बाद इमाम महेदी अले० के सिवा कोई और नहीं हो सकता-जो बसीरत इलल्लाह की सही दावत दे सके।

बसीरत के लग़वी (कोशगत) माना बीनाइ-ए-दिल (अक़्लो शुऊर) के हैं, तो बसारत के माना बीनाइ-ए-चश्म के है। बसारत बसीरत के ताबे है। जैसा कि तज्रिबात से ज़ाहिर है। हम देखते हैं एक बहुत ही कमसिन बच्चा गहवारा (पालना) में हाथ-पाँव मारता पड़ा रहता है। अगरचे क़ुदरत ने उसे आँखें दी हैं। लेकिन वह किसी चीज़ को देखकर पहचान नहीं सकता। बल्कि, फ़ित्री तौर पर उसको मुंह में डाल लेता है। ख़ाह वह चीज़ खाने की क़िसम से हो या न हो। क्योंकि उसमें शुऊर (समझ) न होने की वजह से उसकी आँखें देखने का काम अच्छी तरह अंजाम नहीं देतीं।

जब इसी बच्चे को कुछ शुऊर आ जाता है, तो मुख़्तलिफ़ चीज़ौं में इम्तियाज़ करता, खाने की चीज़ हो तो खा लेता, खेलने की चीज़ हो तो खेलने लगता है, गोया शुऊर के साथ उसकी आँखें देखने का काम निस्बतन् अच्छी तरह अंजाम देने लग जाती हैं। इसी तरह जैसे-जैसे शुऊर बढ़ता था-बसीरत तरक़्क़ी करती जाती है, तो बसारत (आँख की नज़र) उसी क़दर तेज़ होती जाती है और वह हर चीज़ को देखने भालने लगता है।

एक घड़ी साज़-जो अपनी घड़ी साज़ी के फ़न् में अच्छी बसीरत या अच्छा शुऊर रखता है, वह मामूली तरीक़े से चाबी फिराकर कह देता है कि कमान टूट गई है या कोई और चीज ख़राब हो गई है। अगरचे उसने आँख़ौं से नहीं देखा, मगर नक़्स (खोट) उसकी आँख़ौं में ऐसा समा जाता

है कि, गोया उसने आँख़ौं से देख लिया है। इसके बरअक्स जो घड़ी साज़ अपने फ़न् में माहिर नहीं है, वह घड़ी के पूरे औज़ार (उपकरण) खोल कर नक़्स का पता लगायेगा। नतीजा यह कि फ़न् की महारत और शुऊर कामिल ना होने से घड़ी का नक़्स पहले पहल आँख़ौं में समा न सका।

इसी तरह जब इन्सान का शुऊर कामिल होता है, तो वह बड़ा हकीम (बुद्धिमान) और मुदब्बिर (यत्थ शील) कहलाता है, तमाम हिक़्मत और तदबीर की बातें उसकी नज़रौं में समाइ रहती हैं।

बुज़रर्गानि दीन का क्या पूछना, जबकि उन्हें अल्लाह की जानिब से बसीरत या शुऊर हासिल हो। कश्फ़ का ज़रीआ यही बसीरत है। पैग़म्बरौं और अल्लाह के ख़लीफ़ौं की बसीरत आम इन्सानौं से ज़्यादा होती है। वह फ़रिश्तौं को मुजस्सम (साकार) देख सकते हैं। फ़र्मान् "मन् अरफ़ नफ़्सहु फ़क़द अरफ़ रब्बहु" (यानि जिसने अपने नफ़्स को पहचाना वह अपने रब को पहचाना) से बसीरत के हुसूल (प्राप्ति) की तरफ़ इशारा किया गया है और आयत "अदऊ इलल्लाहि अला बसीरतिन्" से भी अल्लाह तआला ने रसूलुल्लाह सल्ला० और महेदी अले० को बसीरत की दावत देने का हुक्म दिया है। बसीरत का तअल्लुक़ ना सिर्फ़ बसारत पर मुन्हसिर है, बल्कि हवासे ख़म्सा (पाँच इंद्रियाँ) ज़ाहिरी और बातिनी पर भी असर अन्दाज़ (प्रभावकारी) होता है। चुनांचे हज़रत उमर रज़ी० और हज़रत सारियह रज़ी० का वाक़ेआ-जो बसारत और समाअत (सुनने) पर असर अन्दाज़ हुआ है, इस बात की काफ़ी शहादत है।

"तारीख़ुल ख़ुलफ़ा" में जलालुद्दीन सुयूती ने बेहक़ी और अबू नुएम के हवाले से लिखा है...

"इब्ने उमर रज़ी० से रिवायत है, वह कहते हैं कि, हज़रत उमर रज़ी० ने एक लश्कर रवाना किया और उसका सरदार ऐसे शख़्स को बनाया जिसको सारियह कहते थे। जब उमर रज़ी० ख़ुत्बा दे रहे थे, तीन बार पुकार कर कहने लगे, ऐ सारियह! पहाड़ की तरफ़ हट जा। लश्कर का क़ासिद (दूत) आया। तो उमर रज़ी० ने उससे हाल दरयाफ़्त किया। उसने कहा, ऐ अमीरूल मोमिनीन! हम हज़ीमत (शिकस्त) पा गये थे कि उसी असना में या सारियह अलजबल की आवाज़ तीन बार सुनी। हमने पहाड़ की तरफ़ पीठ मोड़ ली। ख़ुदा ने उन दुश्मनों को शिकस्त दे दी।"

इसी तारीख़ की बा'ज़ रिवायतों में आया है, कि ख़ुत्बा जुमा की नमाज़ में पढ़ा गया था। जब हज़रत उमर रज़ी० ने ख़ुत्बा तर्क करके, या सारियह अलजबल, दो या तीन दफ़ा फ़र्माया तो हाज़िरीन ने आप पर दीवानगी का आरोप लगाया। मगर जब क़ासिद ख़त लेकर आया तो कहा, हमने या सारियह अलजबल की बुलंद आवाज़ सुनी और हम पहाड़ की तरफ़ हो गये और ख़ुदा ने हमारे दुश्मनों को शिकस्त दे दी। पहाड़-जिसका ज़िक्र रिवायत में आया है, इलाक़ा नहावंद में वाक़े था।

इस वाक़ए से ज़ाहिर है कि, कहाँ हज़रत उमर रज़ी० और कहाँ हज़रत सारियह रज़ी०। इतने फ़ासले पर से हज़रत उमर रज़ी० की आँख़ों के सामने सारियह और उनकी फ़ौज का नक़्शा आ जाता है। उधर हज़रत सारियह रज़ी० हज़रत उमर रज़ी० की आवाज़ नहावंद (हमदान-ईरान) जैसे दूर-दराज़ के मक़ाम पर सुन लेते हैं। यह क्या है! उन बुज़ुर्गों की बसीरत कामिल थी। शुऊर मुकम्मल था। इसलिये उनकी क़ुव्वते बासिरा (देखना) और सामिआ (सुनना) इतने फ़ासले पर वही काम करती है-जो नज़्दीक की चीज़ौं पर काम कर सकती है।

रसूलुल्लाह सल्ला० की बसीरत का वाक़ेआ-जिन पर आयत "क़ुल् हाज़िही सबीली" (अंत तक) नाज़िल हुइ है, निहायत तअज्जुब ख़ीज़ (आश्चर्य जनक) है। मूताह की जंग (8 हिज्री /629 ईसवी) में-जहाँ उमरा की जमाअत शहीद हुई है और ख़ालिद बिन वलीद ने रोमियौं को शिकस्ते फ़ाश दी, तो रसूलुल्लाह सल्ला० मदीना में मिम्बर पर बैठे हूए अश्क जारी थे। फ़र्माया कि, "ज़ैद बिन हारिसा ने निशान लिया। लड़कर शहीद हो गये। जाफ़र बिन अबू तालिब निशान ले कर लड़ते हूए शहीद हो गये। अब्दुल्लाह बिन रवाहा ने भी शहादत पाइ। ख़ालिद बिन वलीद को अल्लाह तआला ने फ़त्ह दी। चंद रोज़ के बाद-जब ख़ालिद बिन वलीद के पास से याली बिन मम्बा फ़त्ह की ख़ुश ख़बरी देने आये, तो नबी सल्ला० ने फ़र्माया, "लश्कर की कैफ़ियत तुम बयान करते हो या मैं बयान करूं?" याली ने अर्ज़ किया, "या रसूलुल्लाह सल्ला०! आप ही फ़र्माइये।" इस पर आपने जंग का पूरा नक़्शा खींचकर रख दिया। याली ने कहा, क़सम है उस ख़ुदा की-जिसने आपको रसूले बरहक़ बनाकर भेजा। आपने जंग का पूरा हाल बयान फ़र्मा दिया।" रसूलुल्लाह सल्ला० ने इर्शाद फ़र्माया कि, अल्लाह तआला ने उस वक़्त जमीन का परदा उठा दिया था। आप मदीना में थे, मगर मूताह की जंग आपकी नज़रौं के सामने हो रही थी।

मुहक़्क़िक़ीन सूफ़िया की तहक़ीक़ की बिना पर रसूलुल्लाह सल्ला० की बसीरत और बसारत पर दो आयते शाहिदे अदल हैं। "मा कज़्ज़बल फ़वाद मारआ" (यानि, मेराज में आपने जिसको देखा, आपका दिल नहीं झुटलाया) दिल को यक़ीने कामिल था कि यही ज़ाते किब्रियाई है। "मा ज़ाग़ल् बसर तग़ा।" (यानि, आपकी आँख झपकी और न हद से बढ़ी) आपने जहाँ जिस जल्व-ए-हक़ीक़ी का नज़ारा मक़सूद था, देख पाया।

बसीरत के इन्तेहाइ दरजे से बसारत का वह इन्तेहाइ दरजा हासिल हो जाता है, जिससे ख़ुदा का दीदार मुम्किन हो जाता है और रसूलुल्लाह सल्ला० की आ'ला बसीरत के बाद-सिवाय इमाम महेदी अले० के, किसी को यह दरजा हासिल नहीं हो सकता। क्योंकि आप ख़लीफ़तुल्लाह, मासूम अनिल ख़ता, वारिसे नबी सल्ला०, दाफ-ए-हलाकते उम्मते मुहम्मदिया, ख़ातिमे विलायते मुहम्मदिया है। आप रसूलुल्लाह सल्ला० के ताबे हैं, तो तमाम अम्बिया और औलिया आपके ताबे हैं। इल्मे सुकूती में आपही सब से बड़े आलिम बिल्लाह, आप ही मुल्हिक़ बिल अम्बिया और रसूलुल्लाह सल्ला० के कदम बक़दम चलने वाले हैं। इन सिफ़ात के दलायल का ज़िक्र हो चुका है। यह वह सिफ़ात हैं, जिनमें कोई आपका मसील और नज़ीर (समान) नहीं है। इसलिये आयत बसीरत इलल्लाह में लफ़्ज़ "मन्" से मुराद क़तअन् और यक़ीनन् इमाम महेदी अले० ही हैं। कोई दूसरा नहीं।

छटी आयते क़ुरआनी

وَاِذِ ابۡتَلٰٓى اِبۡرٰهٖمَ رَبُّهٗ بِكَلِمٰتٍ فَاَتَمَّهُنَّ ؕ قَالَ اِنِّىۡ جَاعِلُكَ لِلنَّاسِ اِمَامًا ؕ قَالَ وَمِنۡ ذُرِّيَّتِىۡ ؕ قَالَ لَا يَنَالُ عَهۡدِى الظّٰلِمِيۡنَ ﴿۱۲۴﴾

(सूरह अल् बकरह : 124)

अनुवाद : जब इब्राहीम को उनके रब ने कई बातौं में आज़माया तो उन्होंने उनको पूरा कर दिखाया। (अल्लाह ने) फ़र्माया, (ऐ इब्राहीम!) मैं तुझको लोगौं का इमाम बनाने वाला हूँ। (इब्राहीन ने) कहा, मुझको इमाम बना और मेरी औलाद में से भी (इमाम बनाना)। (अल्लाह ने) फ़र्माया, मेरा (यह) अहद ज़ालिमौं को नहीं पहुंचेगा।

मुफ़स्सिरीन ने कलिमात की तफ़्सीर में जो कुछ लिखा है, उसका ख़ुलासा यह है : अरब, यहूद और नसारा-सब हज़रत इब्राहीम अले० को मानते थे और अब भी मानते हैं। हर फ़रीक़ को इस पर बड़ा गर्व था कि, हम इब्राहीम अले० की नस्ल में आपके तरीके के पैरो हैं, इसलिये अल्लाह तआला ने अपने उस वादे को-जो इब्राहीम अले० से किया गया था और इब्राहीम अले० ने उस वक़्त जो दुआ की थी, उसका ज़िक्र किया है। यानि इब्राहीम अले० मेरा फ़र्मांबरदार बन्दा है। मैं ने उसको कई बातौं में आजमाया। यानि (१) मैं ने उसको अपने बेटे की क़ुरबानी का हुक्म दिया था। वह उसके लिये आमादा हो गया। (२) मैंने उसको अपने सितारा परस्तौं की मुहब्बत और बिरादरी, बल्कि वतन छोड़ने को कहा, तो उसने उस हुक्म की ताअमील की और वतन छोड़कर मुल्के शाम में जा रहा। (३) अरब जैसे रेगिस्तान मैं इबादत ख़ाना बनाने और उसकी हिफाज़त करने और अपनी औलाद को आबाद करने के लिये कहा, तो वह अपने बेटे इस्माईल को वहाँ बसाया और ख़ान-ए-काअबा बनाया (४) नमरूद ने आग में डाला तो वह ईमान पर क़ायम रहकर आग में गिरना पसंद किया।

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ी० की रिवायत से मालूम होता है। जिसकी ताईद हज़रत आइशा रज़ी० और हसन बसरी रहे० की रिवायत से होती है कि, “कलिमात” से मुराद वह अहकाम हैं, जो तहारते रूहानी और माअरिफ़ते इलाही से मुतअल्लिक़ थे।

मसलन् तौहीद, ईमान बिल ग़ैब, शम्सो क़मर और सितारौं से मुंह फेर लेना। दस अहकाम तहारते जिस्मानी से मुतअल्लिक़ थे। मसलन् मूंछें कतरवाना, कुल्ली करना, नाक साफ़ करना, मिस्वाक करना, सर के

बालौं के बीच में मांग निकालना, नाख़ुन तराश्ना, बग़ल के बाल निकालना, नाफ़ के नीचे के बाल की इस्लाह।

बा'ज़ मुफ़स्सिरीन कहते हैं कि, इब्राहीम अले० का इम्तेहान ख़ुदा-ए-तआला ने ईमान और जानो माल और औलाद के एतिबार से लिया था। जानो ईमान के एतिबार से यह कि, इब्राहीम अले० ने नमरूद की आग में पड़ने और जान देने की परवाह नहीं की। ईमान को सलामत रखा। माल के एतिबार से यह कि, इब्राहीम ने मेहमान नवाज़ी में अपना पूरा माल लुटा दिया। औलाद के एतिबार से यह कि, अपने बेटे की क़ुरबानी के लिये आमादा हो गये। बा'ज़ रिवायात में-जिसके रावी मुजाहिद वग़ैरह हैं, बयान किया गया है कि वह बातें तीस है। दस सूरह अहज़ाब में, दस सूरह अलमोमिनून में और दस सूरह मआरिज में है। एक मोतबर रिवायत में आया है कि वह बातें जुम्ला चालीस हैं। तीस वह है जिनका ज़िक्र किया गया। बाक़ी दस आयत "व इबादुर् रहमानिल् लज़ीन यमशून अलल् अर्ज़ि हौना।" (अल फ़ुरक़ान-63) के तहत हैं।

यही वह बातें थीं, जिनसे ख़ुदा-ए-तआला ने इब्राहीम अले० को आज़माया था और वह आज़माइश में पूरे उत्रे। इन्ही बातौं के बदले में इर्शादे बारी तआला हुआ कि, "मैं तुझको लोगौं का इमाम बनाने वाला हूँ।" इस पर इब्राहीम अले० ने कहा, "मुझे इमाम बनाना और मेरी औलाद में भी इमाम बनाना।" इस दुआ के जवाब में इर्शाद हुआ कि, "जो लोग ज़ालिम नहीं है, बल्कि तेरी औलाद में नेकूकार और फ़रमाँबरदार हैं, उनमें इमाम को पैदा किया जायेगा और उनको इससे फ़ायदा पहुंचेगा।"

इस आयत में "वमिन् ज़ुर्रियती" का जुम्ला ग़ौर तलब है। "वाव" का अत्फ़ लफ़्ज़ "क़ाला" पर-जो इब्राहीम अले० का क़ौल है, या लफ़्ज़

"क़ाला" से पहले के किसी लफ़्ज़ पर भी हो, तो माना की-जो बेरब्ती लाज़िम आयेगी, वह अहले इल्म से मख़्फ़ी नहीं। इसलिये उसका अत्फ़ किसी जुम्ल-ए-महज़ूफा पर होना बेहतर है। जिसकी तक़दीर "अज्अलनी इमामन् वमिन ज़ुर्रियती इमामन्" होगी। क्योंकि आयत के अल्फ़ाज़ इमाम की तक़दीर पर दलालत करते हैं और इमाम नकेरह (जाति वाचक संज्ञा) है, जो कलामे मुसबित में वाक़े हुआ है। जब "इन्नी जाइलुक इमामन्" में इमाम वाहिद (एक वचन) है और इमाम से मुराद इब्राहीम अले० है, तो "क़ाल" के बाद का जो जुम्ला "अज्अलनी इमामन्" मुक़द्दम होगा। उसमें भी इमाम वाहिद होगा-जो तफ़्सीर करेगा, उसी लफ़्ज़ इमाम की जो "अन्नास" के बाद है। फिर अत्फ़ की सूरत में "व मिन् ज़ुर्रियती" में "इमामन्" का लफ़्ज़ वाहिद होगा। जैसा कि आयत "वब्अस फ़ीहिम् रसूलम् मिन्हुम्" में लफ़्ज़ "रसूल" वाहिद है। इसलिये तर्जुमा यह होगा- "अल्लाह ने फ़र्माया कि, ऐ इब्राहीम! मैं तुझे लोगौं का इमाम बनाने वाला हूँ।" तो हज़रत इब्राहीम अले० ने दुआ की कि, "मुझको इमाम बनाना और मेरी औलाद में भी इमाम बनाना।" यह तर्जुमा तक़रीबन् तमाम मुफ़स्सिरीन तस्लीम करते हैं। सिर्फ़ बहस यह है कि, हज़रत इब्राहीम अले० की औलाद में से इमाम कौन होगा और "ज़ुर्रियत" से मुराद बनी इस्हाक़ हैं या बनी इस्माईल।

अगरचे यह बात मुसल्लमा (प्रमाणित) है कि, बनी इस्हाक़ की तेदाद बेशुमार है, जिनमें एक लाख से ज़्यादा पैग़म्बर हूए हैं। उसके साथ ही बनी इस्माईल की तेदाद भी बेशुमार होने की पेशीन गोई तौरात किताब अव्वल बाब (17, 20) में आई है। अल्लाह तआला इब्राहीम अले० से फ़र्माता है, "मैंने तेरी दुआ इस्माईल के हक़ में क़ुबूल की। हाँ! मैंने उसे बर्कत दी और उसे बारआवर किया और उसे बहुत कुछ फ़ज़ीलत दी। उस

से बारह ख़लीफ़े (बेटे) पैदा होंगे। उसको बड़ी क़ौम बनाऊंगा।” (ख़ुत्बाते अहमदिया)

तौरात किताब अव्वल बाब (12, 13, 21) में फ़र्माता है, “कहा अल्लाह तआला ने और इब्राहीम से तेरी नज़रौं में बुरा न मालूम हो, उस लड़के और अपनी लौंडी की वजह से-जो कुछ तुझसे सारह कहे, उसकी बात मान ले। क्योंकि इस्हाक़ से तेरी नस्ल कहलायेगी और उस लौंडी के लड़के को भी एक क़ौम बनाऊंगा। क्योंकि वह तेरी नस्ल से हैं।” (ख़ुत्बाते अहमदिया)

इन बशारात से साबित है कि, ख़ुदा ने बनी इस्माईल को भी बड़ी क़ौम बनाने का वादा फ़र्माया है। जब हज़रत इस्माईल के बारह बेटे थे, तो उनसे कितनी औलाद फैली होगी, ज़ाहिर है। मिसाल के तौर पर देख लो किताब “बहरूल अन्साब” में इमाम मूसा काज़िम बिन इमाम जाफ़र सादिक़ बिन इमाम मुहम्मद बाकर बिन इमाम ज़ैनुल आबिदीन बिन इमाम हुसेन रज़ीअल्लाहु अन्हुम की निस्बत बयान किया गया है कि, आपके (39) फ़र्ज़न्द थे। एक रिवायत में (42) फ़र्ज़न्दौं की सराहत आई है। जब सिर्फ़ एक इमाम मूसा काज़िम की औलाद में-जो ब-तवस्सुत रसूलुल्लाह सल्ला० और फ़ातिमा रज़ी० इस्माईल अले० की नस्ल में हैं। इतनी तेदाद हो तो फिर हज़रत इस्माईल की दूसरी औलाद और औलाद की औलाद किस कदर फैली न होगी। यह है तौरात की बशारत की सदाक़त कि हाजिरा के लड़के को बड़ी क़ौम बनाऊंगा।

इस तहक़ीक़ से साबित है कि, अगर बनी इस्हाक़ की तेदाद बेशुमार हुई है, तो बनी इस्माईल की तेदाद भी बेगिनती है। लेकिन बनी इस्हाक़ और बनी इस्माईल में-जो नुमायाँ फ़र्क़ नजर आता है, वह यह है

कि बनी इस्हाक़ में एक लाख से ज़्यादा पैग़म्बर हूए हैं। उनमें जो मशहूर हैं, उनका ज़िक्र क़ुरआन शरीफ़ में आया है। मसलन् हज़रत याक़ूब, यूसुफ़, मूसा, दाऊद, सुलेमान, ज़करिया, याह्या और ईसा अलैहिमुस्सलाम और बनी इस्माईल में सिर्फ़ एक पैग़म्बर-रसूले अरबी सल्ला० है।

अगर हज़रत इब्राहीम अले० की दुआ में इमाम से मुराद कोई एक पैग़म्बर लिया जाये तो वह या तो बनी इस्हाक़ से होगा या बनी इस्माईल से। अगर बनी इस्हाक़ से मुराद लें, तो चूंकि आयत में इमाम का लफ़्ज़ वाहिद और नकिरह है, जो कलामे मुस्बत में आया है। इसलिये बनी इस्हाक़ में बहुत से पैग़म्बरौं में किसी एक पैग़म्बर को तस्लीम करना होगा। जिस से तरजीह बिला मुरज्जह लाज़िम आयेगी। यानि इमाम से मुराद कोई एक औलादे याक़ूब से लें, तो कहा जायेगा यूसुफ़ से क्यों नहीं? यूसुफ़ कहें, तो मूसा क्यों नहीं? फिर दाऊद क्यों नहीं? सुलेमान क्यों नहीं? इसी तरह ज़करिया, याह्या और ईसा अले० क्यों नहीं? बरअक्स इसके, बनी इस्माईल से मुराद लें तो बनी इस्माईल में एक ही पैग़म्बर हैं। इसलिये ब-क़ौल मुफ़स्सिरीन रसूले अरबी सल्ला० ही मुऐयन हो सकते हैं। यूँ भी जब ख़ुदा-ए-तआला ने बनी इस्हाक़ में से पैग़म्बर पैदा किये हैं, तो फिर इमाम का बनी इस्हाक़ से कोई पैग़म्बर होना क़रीने क़ियास नहीं, सिवाय पैग़म्बरे अरबी सल्ला० के।

अगर पैग़म्बरे अरबी सल्ला० मुराद हो, तो फिर यह सवाल पैदा हो सकता है कि, बनी इस्माईल में इमाम से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० ही हैं, या और कोई-जो इमाम के नाम से मौसूम हो सके। उस वक़्त वह आयत ज़ेरे बहस आ सकती है। जिसमें हज़रत इब्राहीम और इस्माईल अले० ने

ख़ान-ए-काअबा की तामीर के वक़्त अपनी औलाद में से एक रसूल पैदा करने के लिये दुआ फ़र्माई है।

"और (याद करो उस वाक़ए को) जबकि इब्राहीम और इस्माईल काअबा की बुनियादे उठा रहे थे। (उन्होंने यह दुआ की) ऐ हमारे रब! हमसे यह ख़िदमत क़ुबूल कर। बेशक तू (दुआ को) सुनता और जानता है। ऐ हमारे रब! हम दोनों को अपना फर्मांबरदार बना और हमारी औलाद से भी एक फर्मांबरदार गुरोह पैदा कर और हमको हज का दस्तूर बता और हमारी तौबा क़ुबूल कर। बेशक तू तौबा क़ुबूल करने वाला और रहीम है। ऐ हमारे रब! उनमें यानि हमारी औलाद से एक रसूल को मब्ऊस कर-जो तेरी आयात उनके सामने तिलावत करे और उनको किताब और हिकमत सिखाये और उनको पाक करे। बेशक तू ही ज़बरदस्त हिकमत वाला है। (अल बकरह - 127-129)

इस आयत में दूसरी दुआऔं के साथ औलादे इब्राहीम अले० से एक रसूल को मब्ऊस करने की दुआ भी है। मुफ़स्सिरीन ने रसूल से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० ली है। जो सही और क़तई है। क्योंकि हज़रत इब्राहीम के साथ हज़रत इस्माईल अले० का दुआ में शरीक रहना इस बात की दलील है कि, वह रसूल बनी इस्हाक़ से नहीं होगा और हदीसे नबवी से भी जो अरबाज़ से मरवी है और जिसकी तख़रीज इमाम अहमद ने की है रसूल से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० ही साबित होते हैं।

"रसूलुल्लाह सल्ला० फ़र्माते हैं कि, "मैं इल्मे इलाही में उस वक़्त ख़ातिमुन् नबीईन था, जबकि आदम की सिरिश्त (पैदाइश) नहीं हुई थी और मैं तुमको अपनी इब्तेदाइ हालत से मुत्तला (सूचित) करता हूँ, वह यह कि मेरे लिये इब्राहीम ने उस वक़्त दुआ की थी जब वह काअबा की

बुनियादें बुलंद कर रहे थे। ऐ रब! उनमें से एक रसूल को मब्ऊस कर-जो उन्हीं में से हो, और मेरे आने की ईसा अले० ने बशारत दी है और मेरी वालिदा ने मेरी विलादत के मौक़े पर एक ख़्वाब देखा था कि, उनसे ऐस नूर फैलता है कि, शाम के एक शहर बसरा के महल रोशन हो गये हैं।”

जिस तरह आयत “क़ाल इन्नी जाइलुक लिन्नासि इमामन् क़ाल वमिन् ज़ुर्रीयती” से साबित है कि, हज़रत इब्राहीम अले० ने अपनी औलाद से एक इमाम के लिये दुआ की है, तो उसी तरह “रब्बना वब्अस् फ़ीहिम् रसूलम् मिन्हुम” से भी एक रसूल को मब्ऊस करने की दुआ साबित होती है। लेकिन जिस आयत में रसूल को मब्ऊस करने की दुआ की गई है, वह ऐसे वक़्त की गई है-जबकि इब्राहीम और इस्माईल अले० काअबा की तामीर कर रहे थे। जैसा कि “इज़् यर्फ़ऊ इब्राहीमु” के अल्फ़ाज़ दलालत करते हैं। वह आयत जिसमें इमाम को पैदा करने की दुआ की गई है, वह ऐसे वक़्त की गई है-जबकि काअबा की तामीर मुकम्मल हो चुकी है। चुनांचे उसकी तफ़्सीर के तहत नम्बर (3) में बताया गया है। अरब जैसे रेगिस्तान में इबादत ख़ाना बनाने, उसकी हिफाज़त करने और अपनी औलाद को आबाद करने कहा, तो वह अपने बेटे इस्माईल को बसाया और ख़ान-ए-काअबा बनाया। अलावा इसके उसी आयत के बाद “इज़् जअलनल् बैत मसाबतल् लिन्नास व अमनन्” की सराहत आई है। यानि हमने इब्राहीम को कई बातौं में आजमाया तो उसको पूरा पाया। उन बातौं में सबसे बड़ी बात काअबा की तामीर थी। इसलिये हमने काअबा को सवाब हासिल करने की और अमन् की जगह बनाया। ग़र्ज़ मुफ़स्सिरीन की तफ़्सीर से वाज़ेह है कि इमाम की दुआ काअबा की तामीर के बाद की है।

चूंकि क़ुरआन शरीफ़ में इमाम के लफ़्ज़ वाली आयत पहले आई है और रसूल के लफ़्ज़ वाली आयत बाद में आई है, तो उससे कोई हर्ज नहीं। "तफ़्सीर बयानुस् सुब्हान" में लिखा है कि आयाते क़ुरआनी का पहले और बाद में होना या बाद और पहले होना कोई चीज़ नहीं। देखो सूरह इक़रा पहले नाज़िल हुइ है और तीसवें पारे में शामिल है। उसके बाद सूरह फ़ातिहा नाज़िल हुई है-जो क़ुरआन में सब से पहले है। इसी तरह आयते कलाला आख़िरी आयत है, जिसका ज़िक्र तरकात के सिलसिले में सातवें पारे में आया है। पहले और बाद को नज़र अन्दाज़ करके मन्तिक़ के उसूल (तर्क शास्त्र) से ग़ौर तलब अम्र यह है कि, इमाम ख़ास और रसूल आम है। इसलिये मुफ़स्सिरीन ने यह सराहत की है कि, पहले ख़ास लफ़्ज़ कहकर उस से रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ात मुराद ली गई है, तो फिर आम लफ़्ज़ कहकर उससे भी रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ात मुराद है। हालांकि वाक़ेआ उसके बरखिलाफ़ है। क्योंकि जब काअबा की तामीर हो रही थी तो रसूल के लफ़्ज़ के साथ दुआ की गई। उससे रसूलुल्लाह सल्ला० साबित हो चुके। फिर काअबा की तामीर (निर्माण) के बाद जब इमाम के लिये दुआ की गई है तो उससे रसूलुल्लाह सल्ला० मुराद नहीं हो सकते। उसकी वजह यह है कि इमाम का फ़र्दे कामिल रसूल है और इमाम और रसूल में आम ख़ास मुत्लक़ की निस्बत क़रार दी जा सकती है। क्योंकि हर रसूल इमाम और वली हो सकता है, लेकिन इमाम और वली के लिये ज़रूरी नहीं कि वह रसूल भी हो।

रसूल और इमाम के अल्फ़ाज़ में तुसावी की निस्बत भी नहीं कि एक दूसरे पर सादिक़ आ सकें। अगर लफ़्ज़ रसूल और इमाम को ताकीद तस्लीम करें तो यह भी सही नहीं है। क्योंकि ताकीद लफ़्ज़ी होती है या मानवी। ताकीदे लफ़्ज़ी में लफ़्ज़ मुकर्रर आता है। जबकि ताकीदे मानवी

में अल्फ़ाज़ मुतरादिफ़ (समानार्थक) और मुतसावीउल माना होते हैं और यहाँ यह सूरतें नहीं हैं।

फिर उसूलीईन का ज़ाबता यह है कि, वह ताकीद के मुक़ाबिल में तासीस को बेहतर समझते हैं। इस उसूल (नियम) से इमाम से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० नहीं हो सकते।

अगर हम रसूल और इमाम की दोनों आयतौं को-हालांकि वह एक ही रूकूअ में आई है, एक दूसरे का इज्माल और तफ़्सील समझें तो यह सूरत भी मुम्किन नहीं। क्योंकि इमाम के लफ़्ज़ के साथ ऐसे अल्फ़ाज़ नहीं हैं, जो किनायतन् और इशारतन् रसूल की वज़ाहत करें। इसी तरह रसूल के लफ़्ज़ के साथ भी ऐसे अल्फ़ाज़ नहीं हैं, जो किसी तरह इमाम की वज़ाहत करें।

अगर यह तस्लीम किया जाये कि रसूल इमाम की दोनों दुआयें एक शख़्स यानि रसूलुल्लाह सल्ला० के लिये हैं, तो तकरारे दुआ लाज़िम आयेगी। इससे यह शुब्हा पैदा हो सकता है कि, शायद पहली दफ़ा दुआ की कुबूलियत का यकीन नहीं हुआ था, इसलिये लफ़्ज़ रसूल को बदल कर इमाम के लफ़्ज़ के साथ दुबारा दुआ की गई है। हालांकि यह बात पैग़म्बरौं की शान से बईद है। उनकी हर दुआ क़ुबूल होती है। बहरहाल जब रसूल के लिये दुआ क़ुबूल हो चुकी है और वह लफ़्ज़ फ़र्दे कामिल है, तो दुआ की ज़रूरत नहीं। इस से साबित है कि, इमाम से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० नहीं हो सकते। फिर तो आपके सिवा कोई और शख़्स मुराद लेना पड़ेगा।

इससे पहले जो हदीसे अरबाज़ लिखी गई है, उसमें ख़ुद रसूलुल्लाह सल्ला० ने अपने आप को दुआ-ए-इब्राहीम का ज़िक्र करते हूए

सिर्फ़ उस आयत का हवाला दिया है, जिसमें रसूल का लफ़्ज़ है। यानि "वब्अस् फ़ीहिम रसूलम् मिन्हुम्" अगर इमाम से मुराद आप ही होते तो "क़ाल वमिन ज़ुर्रीयती" की आयत का हवाला भी ज़रूर दिया जाता। इससे भी क़तअन् साबित है कि, इमाम से मुराद रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ाते अक़्दस नहीं है।

जब इमाम से रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ाते अक़्दस मुराद नहीं है, तो फिर ऐसी ज़ाते अक़्दस मुराद ली जा सकती है-जो अपनी ख़ुसूसियात में मुम्ताज़ और पैग़म्बराना शान या सीरते रसूलुल्लाह सल्ला० से मुत्तसिफ़ हो।

अगली बहसों में इमाम महेदी अले० दावते बसीरत इलल्लाह में ताबे रसूलुल्लाह सल्ला० और आपके निशाने क़दम पर चलने वाले, मासूम अनिल ख़ता, ख़लीफ़तुल्लाह, दाफ-ए-हलाकत उम्मते मुहम्मदिया साबित हो चुके हैं। इसलिये इमाम से मुराद आयत ज़ेरे बहस में महेदी अले० ही हो सकते हैं। कोई दूसरा नहीं।

सातवीं आयते क़ुरआनी

ثُمَّ اِنَّ عَلَيۡنَا بَيَانَهٗ ﴿۱۹﴾

(अल् क़ियामह : 20)

अनुवाद : फिर हम पर उसका बयान है।

"ख़ुत्बाते अहमदिया" में बयान किया गया है कि, इन्जील यूहन्ना बाब : 14 आयत : 25,26 में लिखा है, "ईसा फ़र्माते हैं : "फ़ारक़लीत" जिसको बाप उसके नाम से भेजेगा, वह हर बात तुमको बता देगा और हर वह बात तुमको याद दिला देगा-जो मैं ने तुम से कही है।

इस क़ौल में सिर्फ़ "फ़ारक़लीत" की पेशीन गोई साबित है। "तफ़्सीरे तावीलात" में ईसा का एक और क़ौल नक़ल किया गया है, "ईसा अले० फ़र्माते हैं कि, हम पैग़म्बर तुम्हारे पास तन्ज़ील ले कर आते हैं। लेकिन अन् करीब महेदी आख़िर ज़माने में तावील लायेंगे।"

इस क़ौल में "नातीकुम" (हम तुम्हारे पास लाते हैं) जमा (बहुवचन) का सीग़ा है और वह इस बात की दलील है कि, तन्ज़ील बिला तावील पैग़म्बरौं का काम है और ईसा अले० उमूमियत के साथ तमाम पैग़म्बरौं की तरफ़ से फ़र्मा रहे हैं, तो रसूलुल्लाह सल्ला० भी पैग़म्बर होने के एतिबार से उसमें शरीक हो सकते हैं औरे तन्ज़ील की तावील के ज़माने को महेदी अले० के ज़ुहूर पर मौक़ूफ़ रखा गया है। तावील से मुराद बयाने क़ुरआन है, जिस पर आयत "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" दलालत करती है। इसकी तफ़्सील आइन्दा मालूम होगी।

शेख़ शहाबुद्दीन इश्राक़ी रहे० ने "हयाकिलुन् नूर" में लिखा है :

"मुस्तब्सिर को अम्बिया के सही होने का एतिक़ाद वाजिब है और इस अम्र का कि उनकी मिसालें हक़ायक़ की तरफ़ इशारा करती हैं। जैसा कि मस्हफ़ में वारिद है कि, "हम यह मिसालें लोगौं के लिये बयान करते हैं और उनको उलमा ही समझते हैं (29:43)" और जैसा कि बा'ज़ अम्बिया ने ख़बर दी है कि, "मैं उन मिसालौं को बयान करने में अपना मुंह खोलता हूँ" पस, तन्ज़ील अम्बिया से मुतअल्लिक़ है और तावील और बयान उस शख़्स की ज़िम्मेदारी पर मौक़ूफ़ है-जो ज़्यादा नूरानी और रूहानी मज़्हरे आज़म है। जिसको फ़ारक़लीत कहते हैं। जैसा कि मसीह अले० ने सूचना दी है कि, "मैं अपने और तुम्हारे बाप की तरफ़ जाता हूँ, ता कि वह तुम्हारी तरफ़ फ़ारक़लीत को भेजे, जो तुमको तावील बताये

वह फ़ारक़लीत-जिसको मेरा बाप उस के नाम से भेजेगा, तुमको हर चीज़ सिखा देगा। मसहफ़ में "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" जो फ़र्माया गया है, उस का इर्शाद उसी की तरफ़ है और "सुम्म" तराख़ी (विलंब) के लिये है।"

"हाशिया हयाकलन् नूर" में लिखा है :

"हयाकलन् नूर" के लेखक का क़ौल-जो बहुत ज़्यादा नूरानी मज़्हरे आज़म कहा गया है, उस से मुराद महेदी अलैहिस्सलाम है।

"शर्ह हयाकलन् नूर" में जलालुद्दीन मुहक़्क़िक़ दव्वानी ने लिखा है :

"लेखक के क़ौल "वल बयान मौकूल" का मतलब यह है कि, उन हक़ाइक को बयान करना-जो सुवरी हिजाब से मुअर्रा (ज़ाहिरी तौर पर बेपरदा) हैं, उस नूरानी रूहानी मज़्हरे आज़म फ़ारक़लीत के जिम्मे हैं-जो फ़ारिक़लीता से मन्सूब है। यह शब्द इब्रानी भाषा का है और उसका अर्थ हक़ और बातिल में फ़र्क़ करने वाले के हैं और उससे मुराद मज़्हरे विलायत है, जो नबूवत का बातिन है।

मुहक़्क़िक़ दब्बानी ने यह भी लिखा है :

"क़ुरआन में इस तरफ़ इशारा किया गया है-जैसा कि फ़र्माया है, "फिर हम पर उसका बयान है।" इसमें "सुम्म" तराख़ी (देर) के लिये है, यानि अल्लाह तआला के इस क़ौल "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" से मालूम होता है, कि ख़ातिम पर नाज़िल शुदा औज़ाअ् और अतवार के हक़ाइक़ का कामिल कश्फ़ और ज़ाहिरी लिबास से बेपरदा बयान ख़ातिमे नबूवत से मुतराख़ी है और उसका ज़ुहूर फ़ारक़लीत के ज़माने में होगा-जो आँहज़रत

सल्ला० के विलायते ख़ास्सा का मज़्हर है। इक़्तिज़ा-ए-नबुवत के मुताबिक़-जो रक़ीक़ हिजाब (क़ौमल परदा) हाइल हैं, उन हिजाबौं का दूर करना भी अहले ज़माना की इस्तेअ्दाद और काबिलियत का लिहाज करते हूए विलायते खास्सा मुहम्मदीया के मज़्हर पर मौक़ूफ़ है।"

इन अक़्वाल से साबित है कि, मशाहीरे (प्रसिद्ध) अहले सुन्नत भी इस बात से सहमत हैं कि, क़ुरआन के मआरिफ़ और हक़ाइक़ का सहीह इंकिशाफ़ (प्रकटन) या उनका हक़ीक़ी बयान मज़्हरे विलायते ख़ास्सा मुहम्मदीया महेदी अले० पर मौक़ूफ़ है और क़ुरआन शरीफ़ में आयत "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" का तअल्लुक़ आप ही के बयान और ज़माने से है।

हज़रत ईसा अले० के फ़रामीन या बशारात में ख़ुद फ़ारक़लीत से मुराद महेदी अले० होना ज़ाहिर हो चुका है। इसलिये हम कह सकते हैं कि जिस तरह क़ुरआन शरीफ़ की आयत يَاْتِيْ مِنْۢ بَعْدِي اسْمُهٗٓ اَحْمَدُ (और एक रसूल की शुभ-सूचना देता हूँ-जो मेरे बाद आयेगा, उसका नाम अहमद है) से जो ईसा अले० का क़ौल है, उस से रसूलुल्लाह सल्ला० मुबश्शरे ईसा साबित होते हैं। इसी तरह फ़ारकलीत की पेशीन गोई और "तफ़्सीरे तावीलात" के मुसरेहा क़ौल

نحن تاتيكم بالتنزيل واما التاويل فسياتى به المهدي في آخر الزماں

से जो ईसा अले० का क़ौल ज़ाहिर किया गया है, महेदी अले० मुबश्शरे ईसा अले० साबित होते हैं और बयाने क़ुरआन उसके हक़ाइक़ के साथ महेदी अले० की ज़बान से होगा। यही मतलब है आयत "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" का।

इस वक़्त सिर्फ़ एक बहस बाक़ी रह जाती है-जो आयत “सुम्म इन्न अलैना बयानहु” से मुतअल्लिक़ हो सकती हैं। जिसको शेख़े मक़्तूल और मुहक़्क़िक़ दव्वानी ने अपने अक़्वाल के ज़िमन में बयान किया है। मुनासिब मालूम होता है कि, उसकी कुछ तफ़्सील बयान कर दी जाये।

हदीसे उमर बिन ख़त्ताब रज़ी० से ज़ाहिर है कि, एक अजनबी शख़्स आता है और रसूलुल्लाह सल्ला० से इस्लाम, ईमान और एहसान की तारीफ़ पूछता है। आप उसको तारीफ़ समझाते हैं और वह हर वक़्त “सच कहा” के अल्फ़ाज़ कहकर चला जाता है। उसके बाद रसूलुल्लाह सल्ला० हज़रत उमर रज़ी० से फ़रमाते हैं कि, “क्या तुम जानते हो, यह कौन शख़्स है?” हज़रत उमर रज़ी० अपनी ला इल्मी ज़ाहिर करते है। उस पर रसूलुल्लाह सल्ला० फ़रमाते हैं कि, “यह जिब्रईल थे। जो तुम्हारे पास तुम को इल्मे दीन सिखाने के लिये आये थे।” इस्लाम, ईमान और एहसान का नाम दीन है और इस्लाम और ईमान की तालीम इस्लाम के पहले दौर में मुकम्मल तौर पर दी जा चुकी है। क्योंकि जो लोग मुसलमान होना चाहते थे, उन्हें शहादतैन् पढ़ा कर मुसलमान बनाया जाता था और मुसलमान हस्बे अहकामे क़ुरआन नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात के पाबंद और ईमानियात पर साबित क़दम थे। फिर यही तरीक़ा जारी रहा।

किसी हदीस से यह साबित नहीं होता कि, एहसान की तालीम किस तरह दी जाती थी? जबकि हदीसे उमर रज़ी० में एहसान के बारे में जिब्रईल अले० को-जिन अल्फ़ाज़ में जवाब दिया गया, यानि “तुम को अल्लाह की इबादत इस तरह करनी चाहिये, गोया कि तुम उस को देख रहे हो। अगर तुम उसको न देखते हो तो वह तुमको देख़ता है।” इस से

तरीक-ए-तालीम का अंदाज़ या उसके राज़ का इंकिशाफ़ नहीं होता। चुनांचे अबू हुरेरा रज़ी० फ़रमाते हैं :

“मैंने रसूलुल्लाह सल्ला० से दो ज़र्फ़ (पात्र) महफ़ूज़ रखे है, एक को मैंने ज़ाहिर कर दिया। अगर दूसरे को ज़ाहिर करूँ तो यह मेरा हलक़ (कंठ) कट जायेगा। इस रिवायत में जिन दो ज़रफौं का ज़िक्र आया है उनमें एक इल्मे अहकाम और अख़लाक़ है और दूसरा इल्मे असरार है। चुनांचे “फ़स्लुल् ख़िताब” में इसी रिवायत के विषय में लिखा है :

“पहले ज़र्फ़ से मुराद इल्मे अहकाम और अख़लाक़ है, दूसरे से इल्मे असरार।

बुख़ारी की शर्ह “इरशादुस् सारी” में दूसरे ज़र्फ़ के बारे में लिखा है :

“इस से वह इल्मे असरार मुराद है, जो अग़यार से महफ़ूज़ और उलमा-ए-बिल्लाह से मख़्सूस है। जो अहले इरफान और मुशाहदात में हैं।”

इल्मे अहकामो अख़लाक़ वह इल्मे ज़ाहिर है, जो सब पर ज़ाहिर कर दिया गया। यही इल्मे शरीअत है और इल्मे असरार वह इल्में बातिन है। जिस की तालीम खुले तौर पर नहीं दी गई। वही एहसान है।

एहसान की तालीम खुले तौर पर न दी जाने की वजह यह थी कि, यह अहकाम ख़ास विलायते मुहम्मदीया से तअल्लुक़ रखते हैं और अहकामे शरई से ज़्यादा सख़्त हैं। अगर इब्तदा-ए-इस्लाम में उन अहकाम की तालीम दी जाती तो लोग सख़्ती महसूस करते। अम्बिया अले० की दावत और नुज़ूले क़ुरआन शरीफ़ का मन्शा (उद्देश्य) यह नहीं हो सकता था कि इब्तदा ही में लोगौं को मुश्किलात का सामना हो। यही वजह थी

कि अल्लाह तआला रसूलुल्लाह सल्ला० से मुख़ातिब हो कर फ़रमाता है : “ऐ नबी ! हिकमत और सदुपदेश के साथ अपने ‘रब’ के मार्ग की ओर बुलाओ (अन्-नह्ल-125)

“तफ़्सीर अराइसुल बयान” में अल्लामा रूज़बहान् ने लिखा है :

“ऐ मुहम्मद सल्ला०! जम्हूर (जनता) से शरीअत कि ज़बान में कलाम करो, न कि हक़ीक़त की जबान में। अगर तुम उनके साथ हक़ीक़त के लहजे में बात करोगे तो उनकी अक़्लें परागंध: (अस्थ व्यस्थ) हो जायेंगी और हक़ाइक़ बिला इल्म व फ़हम रह जायेंगे और नेक नसीहत वह है, जिस में हज़्ज़े नफ़्स (आनंद) न हो और ख़लायक़ (लोगौं) की अक़्ल और ताक़त के मुवाफ़िक़ हो।”

अल्लाह तआला का इर्शाद होता है :

“ऐ मुहम्मद सल्ला०! (अहकाम फ़र्ज़ करने में) अगर तुम सख़्त दिल होते तो लोग तुम्हारे पास से भाग खड़े होते।” (आले इमरान - 159)

“तफ़्सीर अराइसुल बयान” में इसी आयत के तहत लिखा है :

“अगर नबी सल्ला० हक़ीक़त के अहकाम बयान कर देते तो उनके सीने तंग हो जाते और वह हक़ीक़ते आदाब का बोझ बरदाश्त नहीं कर सकते, लेकिन आपने उनके साथ नरमी की-शरीअत और रुख़्सती अहकाम में। उसकी तस्दीक़ ख़ुदा का वह क़ौल है कि उनको मुआफ़ करो और उनके लिये मग़फ़िरत चाहो।”

आँहज़रत सल्ला० अहकाम की तब्लीग़ में जिस हिकमते अमली (वास्तविक अनुभव) से काम लिया था, उस को साहबे “तफ़्सीरे कबीर” इमाम फ़ख़रूद्दीन राज़ी ने इस तरह रिवायत की है:

"अल्लाह ने हम पर बड़ा एहसान किया। हम मुशरिक थे, अगर रसूलुल्लाह सल्ला० सारे अहकाम एक ही मरतबा फ़र्ज़ कर देते और पूरा क़ुरआन एक ही बार नाज़िल हो जाता तो सारे अहकाम की ताअ्मील दुश्वार हो जाती और हम इस्लाम में दाख़िल न होते। लेकिन आपने हमको दीने इस्लाम की तरफ़ नरमी से बुलाया। यहाँ तक कि दीन पूरा हो गया और शरीअत कामिल हो गई।"

इन अक़्वाल से साबित है कि, रिसालत मआब सल्ला० ने 23 साल तक तौहीद और रिसालत की दावत फ़रमाई और बड़ी हिकमते अमली और नेक नसीहत से शरीअत के अहकाम की तामील कराई। अब रहे हक़ीक़त या एहसान के अहकाम-जिन की तालीम खुले तौर पर नहीं हुई। उनका तअल्लुक़ विलायते मुहम्मदीया के ख़ातिम हज़रत महेदी अले० से है और "सुम्म इन्न अलैका बयानहु" यानि यह कि मआनी-ए-क़ुरआन का बयान फिर हम पर है या हम उसके जिम्मेदार हैं, की आयत का मतलब यही है और यह अहकाम ताख़ीर के साथ महेदी अले० की जबान से ज़ाहिर होंगे।

अगर यह कहा जाये कि शब्द "सुम्म" जो तराख़ी और ताख़ीर (विलंब) के लिये आता है, तो उसकी कोई हद (सीमा) भी मुअैयन (नियत) है, उसका जवाब यह है कि उसका कोई कायदा (नियम) मुकर्रर नहीं है। थोड़ी ताख़ीर भी जाइज़ है। जैसा कि हम कहते हैं 'ज़ैद आया, उसके बाद उमर आया, ज़्यादा से ज़्यादा ताख़ीर क़ियामत तक भी हो सकती है। जैसा कि आयत "सुम्म इन्न अलैना बयनहु" से ज़ाहिर है, लेकिन आयत "सुम्म इन अलैना बयानहु" की ताख़ीर ज़ुहूरे महेदी अले० पर मौक़ूफ़ है।

अगर यह कहा जाये कि "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" से पहले की आयतें शुब्हा ज़ाहिर करती हैं कि क़ुरआन के मआनी के बयान में ज़्यादा ताख़ीर न हुई होगी। जबकि बयाने क़ुरआन अवाएले इस्लाम और रसूलुल्लाह सल्ला० की जिंदगी में होना साबित हो सकता है। इस का मुख़्तसर जवाब यह है कि, आयत "सुम्म इन अलैना बयानहु" के पहले की आयतें यह है :

(١) لَا تُحَرِّكْ بِهٖ لِسَانَكَ لِتَعْجَلَ بِهٖ ﴿١٦﴾

ऐ मुहम्मद सल्ला०! वही के पढ़ने के लिये अपनी ज़बान न चलाया करो, कि उसको जल्द याद कर लो।

(٢) اِنَّ عَلَيْنَا جَمْعَهٗ وَقُرْاٰنَهٗ ﴿١٧﴾

उसका जमा करना और पढ़ाना हमारे ज़िम्मे है।

(٣) فَاِذَا قَرَاْنٰهُ فَاتَّبِعْ قُرْاٰنَهٗ ﴿١٨﴾

जब वही पढ़ी जाये तो उसको सुना करो और फिर उसी तरह पढ़ा करो।

अक्सर तफ़ासीर में बयान किया गया है कि, इधर जिब्रईल अले० 'वही' सुनाने लगे। उधर साथ-साथ आँहज़रत सल्ला० भी पढ़ते ज़ाते थे और ख़याल यह था कि भूल न जाऊँ, इसलिये जल्दी करने से मना किया गया। फिर यह भी इर्शाद हुआ कि 'वही' को दिल में जमा कर देना और उसको पढ़वा देना हमारे ज़िम्मे है। जिस वक़्त हम जिब्रईल अले० के ज़रीए 'वही' पढें (उसको सुनो) और फिर उसी तरह दोहराओ। यह आयतें सिर्फ़ अल्फ़ाज़ (शब्दों) से मुतअल्लिक़ हैं और आयत "सुम्म इन्न अलैना

बयानहु" का तअल्लुक़ अल्फ़ाज़ के पढ़वा देने या दिल में जमा कर देने या अल्फ़ाज़ के दोहराने से नहीं है। बल्कि क़ुरआन के मआनी (अर्थ) से मुतअल्लिक़ है। जैसा कि उसके अनुवाद से ज़ाहिर है-फिर उस के (मआनी) का बयान हमारे ज़िम्मे है। देखो क़ुरआन शरीफ़ का अनुवाद-जो फ़तेह मुहम्मद साहब जालंधरी ने किया है। इसके अलावा "सुम्म" का शब्द ज़ाहिर करता है कि, इस आयत को उसके पहले की आयतौं से कोई तअल्लुक़ नहीं। जबकि यह शब्द "सुम्म" तरतीब मअत् तराख़ी (देर) के लिये आता है।

शेख़ शहाबुद्दीन मक़तूल के क़ौल और मुहक़्क़िक़ दव्वानी की तश्रीह से साबित है कि, हज़रत ईसा अले० ने आख़िर जमाने में फ़ारक़लीत के आने की ख़बर दी है और क़ुरआन की आयत "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" से ताख़ीर के साथ मआनी-ए-क़ुरआन के-जिस बयान का वादा किया गया है, वह फ़ारक़लीत की ज़बान से होगा और फ़ारक़लीत से मुराद ख़ातिमे विलायते मुहम्मदीया यानि महेदी अले० हैं।

अगर यह कहा जाये कि, आयत "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" में मआनी के-जिस बयान का वादा किया गया है, वह आँहज़रत सल्ला० के ज़माने ही में हो गया है, तो यह बात हज़रत ईसा अले० की इस बशारत के खिलाफ़ है-जो आप ने इर्शाद फ़र्माया है, कि तन्ज़ील का लाना हम पैग़म्बरौं का काम है और तावील आख़िर ज़माने में फ़ारक़लीत यानि महेदी अले० लायेंगे।

आयत "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" में शब्द "सुम्म" का ताख़ीर पर दलालत करना-इस वजह से भी मुहक़्क़क़ (निश्चित) है कि, यह आयत सूरह क़ियामत में आई है। जिसमें तमाम बशारात कमो बेश (कम या

ज़्यादा) ताख़ीर (देर) से वाक़ेअ् (घटित) होने वाले हैं। अगर इस आयत "सुम्म इन अलैना बयानहु" में मआनी के बयान में ताख़ीर मक़्सूद न होती तो उसका सूरह क़ियामत में ज़िक्र नहीं किया जाता।

अगर यह कहा जाये कि, क़ुरआन के हक़ाइक़ का बयान इतनी ताख़ीर से हो तो गुज़रे हूए ज़माने के मुसलमानौं का क़ुरआन के फ़ैज़ से महरूम होना लाज़िम आ जायेगा। उसका जवाब ख़ुद ज़माने के इक़्तिज़ा (आवश्यकता) से लेना चाहिये। जिसकी वजह से हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० ने इल्मे असरार के बयान करने में हलक़ कट जाने का उज़र किया और हज़रत ईसा अले० ने तन्ज़ील के बयान की तावील को महेदी के आख़िर ज़माने से मुतअल्लिक़ होना बयान किया है।

असल हक़ीक़त यह है कि इस्लाम के इब्तदाई दौर की फ़िज़ा असरार (रहस्य) को ज़ाहिर कर के लोगौं को सख़्ती में डालने या महसूस करा देने के क़ाबिल नहीं थी। असरार यानि एहसान के मसाइल पर क्या मौक़ूफ़ है। बहुत से क़ुरआनी हक़ाइक़ की तावील और उनका बयान रसूलुल्लाह सल्ला० की वफ़ात के बाद और आख़िर ज़मान-ए-क़ियामत में होना ज़ाहिर है। जैसा कि "मआलिमुत् तन्ज़ील" में लिखा है :

"क़ुरआन का बा'ज़ हिस्सा ऐसा है, जिसकी तावील उसके नुज़ूल से पहले ज़ाहिर हो चुकी है और बा'ज़ हिस्सा ऐसा है, जिसकी तावील रसूलुल्लाह सल्ला० के जमाने में ज़ाहिर हो चुकी है और बा'ज़ हिस्सा ऐसा है, जिसकी तावील रसूलुल्लाह सल्ला० के बाद होगी और बा'ज़ हिस्सा ऐसा है, जिसकी तावील आखिर ज़माने में होगी।

इस से ज़ाहिर है कि जिन क़ुरआनी हिस्सों की तावील रसूलुल्लाह सल्ला० की वफ़ात के बाद और आख़िर ज़माने में होगी। उन से गुज़िश्ता

ज़माने के मुसलमान बयाने क़ुरआन के फ़ैज़ से महरूम हो, तो उसकी तलाफ़ी की क्या सूरत होगी!

सहीह यह है कि इमाम महेदी अले० बमूजिबे हदीस

يختم الله به الدين كما فتحه بنا

(रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया कि अल्लाह तआला महेदी पर दीन को ख़त्म करेगा, जैसा कि हम से शुरू किया है) ख़ातिमे दीन है। विलायते मुहम्मदीया के अहकाम की तब्लीग़ और दावत इमाम महेदी अले० की ज़बान से ताख़ीर के साथ होना ज़रूरी है। जबकि लोग अहकामे शरीअत के पाबंद और आदी हो कर अहकामे विलायत को बरदाश्त करने के काबिल हो जायें। यही मतलब है "सुम्म इन्न अलैना बयानहु" का।

आठवीं आयते क़ुरआनी

يَآيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ فَسَوْفَ يَاْتِي اللّٰهُ بِقَوْمٍ يُحِبُّهُمْ وَيُحِبُّوْنَهٗٓ ۙ اَذِلَّةٍ عَلَي الْمُؤْمِنِيْنَ اَعِزَّةٍ عَلَي الْكٰفِرِيْنَ ۡ يُجَاهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ ۭ ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿۵۴﴾

(सूरह माइदा : 54)

अनुवाद : ऐ ईमान वालो! जो लोग तुम में से अपने दीन से फिर जायेंगे तो अल्लाह तआला ऐसी क़ौम को लायेगा, जिसको अल्लाह दोस्त रखेगा और अल्लाह को वह दोस्त रखेंगे। मोमिनीन के हक़ में नर्म और काफ़िरौं के हक़ में सख़्त होगी। ख़ुदा की राह में जहाद करेगी, मलामत करने वालों की मलामत से नहीं डरेगी। यह अल्लाह का फ़ज़ल है, वह जिसको चाहता है-देता है। अल्लाह तआला वसीअ् फ़ज़ल वाला अलीम हैं।

इस आयत में "फ़-सौफ़ याती अल्लाहु बिक़ौमिन्" का जुम्ला और उसके पहले और बाद की आयतें हमारे दावे को साबित करती हैं। इस आयत में "याती" मुज़ारे (अनिर्दिष्ट भूतकाल) का सीग़ा है। जिसके पहले "सौफ़' का लफ़्ज़ है। जिस से मुज़ारे मुस्तक़बिल बईदु के माने देता है और "बिक़ौमिन्" में बाए ताअदिया है, या बामाने मुसाहिबत (साहचर्य) है। अगर बाए ताअदिया तसव्वुर करें तो आयत के यह माने (अर्थ) होंगे। "अल्लाह तआला एक क़ौम को मुस्तक़बिले बईद (असनिहित भविष्य) में लायेगा और अगर अर्थ मूसाहबत लें तो अनुवाद यह होगा "अल्लाह मुस्तक़बिले बईद में एक क़ौम के साथ आयेगा।"

क़ुरआन शरीफ़ में बाए ताअदिया का इस्तेमाल लफ़्ज़ "याती" के साथ अक्सर जगह आया है। लेकिन बाए मूसाहबत का इस्तेमाल बहुत कम आया है। मिसाल के तौर पर एक आयत पेश की जाती है...

وَلَا تَعْضُلُوْهُنَّ لِتَذْهَبُوْا بِبَعْضِ مَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اِلَّآ اَنْ يَّاْتِيْنَ بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ

(सूरह अन्निसा : 19)

अनुवाद : तुम ने औरतौं को-जो कुछ दिया है, उसको लेने के लिये उन्हें न रोको। मगर जबकि वह खुले तौर पर बदकारी के मुर्तकिब हो तो रोको।

इस आयत में "बिफ़ाहिशतिन्" के माने "बदकारी के साथ" हो रहे हैं।

इस सुरत में "फ़-सौफ़ याती अल्लाहु बिक़ौमिन्" की आयत में "क़ौम" से मुराद क़ौमे महेदी और लफ़्ज़ अल्लाह से मुराद इमाम महेदी अले० का ज़ुहूर मुराद हो सकता है।

इस आयत में लफ़्ज़ "अल्लाह" से किसी मामूर मिनल्लाह का ज़ुहूर मुराद लिया जाये तो यह बात उसी उसूल के तहत होगी जो उलमा-ए-इस्लाम के मुसल्लमात (प्रमाणित) से है। जैसा की तौरेत की बशारत के अल्फ़ाज़ यह है...

ان اللّٰہ طلع من سینا اشرق لھم من السیعیر و من جبل فاران تجلّی

अनुवाद: अल्लाह तआला सीना से तुलू (प्रकट) हुआ। सेईर से चमका और कोहे फ़ारान् से तजल्ली किया।

तौरेत की इस पेशीन गोई में अल्लाह तआला के "सीना" से तुलू होने से मुराद मूसा अले० है और "सेईर" से अल्लाह तआला के चमकने से मुराद ईसा अले० का ज़ुहूर और कोहे "फ़ारान्" से अल्लाह तआला के तजल्ली करने से मुराद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का ज़ुहूर है।

इसी तरह किताब हब्क़ूक़ बाब-3, आयत-3 में बयान किया गया है।

باتی اللّٰہ من جنوب (تیمان) والقدوس من جیل فاران

अनुवाद: अल्लाह तआला जुनूब तैमान से और क़ुद्दूस कोहे फ़ारान् से आयेगा।

तौरेत की पेशीन गोई ख़ास रसूलुल्लाह सल्ला० से मख़्सूस है जिसमें अल्लाह तआला ने अपने हबीबे ख़ास के जाहो-जलाल (वैभव) को ज़ाहिर करने के लिये अपना ज़ुहूर फ़र्माया।

उसी तरह "मलाका" नबी की किताब में बाब-3 में लिखा है कि, जिस ख़ुदावंद के तफ़हहूस में हो यानि रसूले अहद के वह अपनी हैकल (रूप) में आ जायेगा। (ख़ुत्बाते अहमदिया)

जब इन बशारात में अल्लाह के ज़ुहूर से हज़रत मूसा अले०, हज़रत ईसा अले० और हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० का ज़ुहूर (प्रकट होना) मुराद है, तो आयत "फ़-सौफ याती अल्लाहु बिक़ौमिन्" (यानि अल्लाह तआला मुस्तक़बिल बईद में एक क़ौम को लायेगा या एक क़ौम के साथ आयेगा) में भी ज़रूर अल्लाह से ऐसे शख़्स का ज़ुहूर मुराद होना चाहिये-जो उन पैग़म्बरों के जैसा जाहो-जलाल रख़ता हो। क्योंकि जिस तरह किताब हब्क़ूक़ में "याती अल्लाहु" आया है और उस से रसूलुल्लाह सल्ला० मुराद हैं, तो उसी तरह "फ़-सौफ़ याती अल्लाहू बिक़ौमिन्" में "याती अल्लाहु" के अल्फ़ाज़ से किसी साहबे जाहो-जलाल ख़लीफ़तुल्लाह का ज़ुहूर मुराद हो सकता है।

आयत "फ़-सौफ़ याती अल्लाहू बिक़ौमिन् युहिब्बुहुम व युहिब्बूनहु" की बशारत मानवही (अर्थगत) हैसियत से ठीक ऐसी ही है-जैसे तौरेत की ऊपर लिखी गई बशारत रसूलुल्लाह सल्ला० से मुतअल्लक़ आई है, क्योंकि तौरेत में "मिन जिबले फ़ारान् तजल्ला" के सिलसिले में "बि-यमी निहि शरीअतिन् बैज़ा व बि जिंदिल मलाइकति अता" के अल्फ़ाज़ आये हैं (यानि अल्लाह तआला कोहे फ़ारान् से तजल्ली किया, उसके दायें हाथ में रोशन शरीअत है और वह मलाइका के लश्कर के साथ आया)। तौरेत की इस आयत में "तजल्ला" और "अता" जिस का अर्थ "तजल्ली किया" और "आया" के हैं, तो आयत "फ़-सौफ़ याती अल्लाहु बिक़ौमिन्" में "याती" मुज़ारे का सीग़ा है-जो हर्फ़ "सौफ़" की वजह से मुस्तकबिले बईद के माने दे रहा है। अगर क़ुरआन शरीफ़ में "याती" की जगह "अता" का लफ़्ज़ आता-जैसा कि तौरेत में मूसा अले० का ज़ुहूर साबित करने के लिये "तलेआ" का लफ़्ज़ आया है, जो माज़ी (भूतकाल) का सीग़ा है, तो उस सूरत में जिस तरह तौरेत में "तलेआ" से मूसा

अले० का ज़ुहूर साबित हुआ है। उसी तरह क़ुरआन शरीफ़ में भी लफ़्ज़ “अता” से रसूलुल्लाह सल्ला० का ज़ुहूर साबित होता। मगर अल्लाह तआला ने फ़र्क़ ज़ाहिर करने के लिये तौरेत में “तजल्ला” और “अता” से-जो माज़ी के सीग़े हैं, रसूलुल्लाह सल्ला० का ज़ुहूर साबित किया है। तो क़ुरआन शरीफ़ में “फ़-सौफ़ याती अल्लाहु” के अल्फ़ाज़ से जो आइंदा ज़माने (भविष्यकाल) पर दलालत करते हैं। किसी मामूर मिनल्लाह का ज़ुहूर साबित किया है। इसके अलावा तौरेत में “जुंदुल मलाइका” (मलाइका का लश्कर) के अल्फ़ाज़ आये हैं। जिस से रसूलुल्लाह सल्ला० के सहाबा मुराद हैं, तो क़ुरआन शरीफ़ में “क़ौम” का लफ़्ज़ आया है। जिस से किसी मामूर मिनल्लाह के अस्हाब साबित हो सकते हैं।

अगर हम क़ौम के सिफ़ात पर ग़ौर करें तो मालूम होगा कि, वह सिफ़ात तक़रीबन् अस्हाबे रसूल सल्ला० के सिफ़ात के मुमासिल (समान) हैं। चुनांचे क़ौम की सिफ़ात इस आयत में यह आई हैं...

1. उस क़ौम को ख़ुदा दोस्त रखेगा और वह क़ौम ख़ुदा को दोस्त रखेगी।

2. वह क़ौम मोमिनीन् के हक़ में नर्म दिल (और) क़ाफ़िरौं के हक़ में सख़्त है।

3. वह क़ौम अल्लाह की राह में जहाद करेगी और मलामत करने वालों की मलामत से नहीं डरेगी।

4. यह अल्लाह का फ़ज़ल है और अल्लाह यह सिफ़ात-जिसको चाहता है, देता है। और अल्लाह वसीअ् फ़ज़ल वाला और अलीम (सर्वज्ञ) है।

नम्बर (1) में क़ौम की-जो सिफ़त बयान की गई है, उसके अल्फ़ाज़ यह है : " ख़ुदा उस क़ौम से मुहब्बत रखेगा और वह क़ौम ख़ुदा से मुहब्बत रखेगी।" उसके मुक़ाबिल में अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० की सिफ़त में बयान किया गया है कि, "ख़ुदा उनसे राज़ी और ख़ुश है, तो वह सब अल्लाह से राजी और ख़ुश हैं। राज़ी और ख़ुश रहना ख़ुद मुहब्बत की दलील है। इसलिये क़ौम की पहली सिफ़त अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० की सिफ़त के मुमासिल और मूसाहिम (समान) है।

उसके बाद आयत "फ़-सौफ़ याती अल्लाहु" में मुसलसल तीन सिफ़ात बयान की गई हैं। यह भी अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० की तीन सिफ़ात के मुमासिल और मूसाहिम हैं-जो सूरह अल-फ़त्ह की आयत (29) में आई हैं। हम यहाँ उनको बिलमुक़ाबिल लिखकर बताते हैं।

क़ौम की सिफ़ात	**अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० की सिफ़ात**
1.वह क़ौम मोमिनीन के हक़ में नर्म दिल और काफ़िरौं के हक़ में सख़्त है।	1.मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं और जो लोग आपके साथ हैं कुफ़्फ़ार पर सख़्त और आपस में यानि मोमिनीन के हक़ में नर्म हैं।
2. वह क़ौम अल्लाह की राह में जहाद करेगी और मलामत करने वालौं की मलामत (निंदा) से नहीं डरेगी।	2. तुम उनको रूकु करने वाले और सज्दा करने वाले देखोगे।
3. यह अल्लाह का फ़ज़ल है।	3. वह अल्लाह का फ़ज़्ल और

ऐसे सिफ़ात वह जिसको चाहता है-देता है और अल्लाह बड़ा फ़ज़्ल वाला और अलीम है।	रज़ामंदी चाहते हैं। कसरते सुजूद की वजह से उनके चहरौं पर नूरानी निशान हैं।

पहली और तीसरी आयतौं का मतलब बिलकुल एकसाँ है। सिर्फ़ दूसरे नम्बर में क़ौम को मुजाहिद बताया गया है, तो अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० को इबादत करने वाले बताया गया है। अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० ग़ज़्व-ए-बदर और ग़ज़्व-ए-उहर के बाद जब मक्का फ़त्ह कर चुके तो उस सूरत में लोगौं को फ़राग़त (बेफ़्रिकी) के साथ ख़ुदा की इबादत का मौक़ा मिला। इसलिये "रूकू करने वाले, सज्दा करने वाले" कहा गया-जो मुबालग़ा के सीग़े है, लेकिन क़ौम की सिफ़त सिर्फ़ मुजाहिद बताई गई और जहादे असग़र तो ख़ुद इबादत है। लेकिन जहादे अकबर-जिसको नफ़्स और शैतान के साथ जहाद कहते हैं, यह भी सरासर इबादत ही इबादत है।

तफ़्सीरे कबीर में आयत "माल और जान से जहाद करने वालौं को बैठे रहने वालौं पर अल्लाह ने दर्जे में फ़ज़ीलत बख़्शी है। (अन्-निसा 95)" के तहत जहादे अकबर की निस्बत लिखा गया है।

"इस जहादे अकबर का माहसल (निष्कर्ष) क़ल्ब (दिल) को ग़ैरुल्लाह से हटाकर अल्लाह ही की ताअत में मुस्तग़रक़ (मग्न) रखना है, जबकि यह मक़ाम पहले मक़ाम से आ'ला (उच्च) है। इसलिये पहले मक़ाम की फ़ज़ीलत एक दर्जा और इस दूसरे मक़ाम की फ़ज़ीलत कई दर्जे है।"

जब आयत “फ़-सौफ़ याती अल्लाहु बिक़ौमिन” में क़ौम की सिफ़ात अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० की सिफ़ात से मुमासिल और मुसाहिम हैं। तो ज़ाहिर है कि, वह क़ौम ज़रूर किसी मामूर मिनल्लाह या ख़लीफ़तुल्लाह की है, वर्ना दुनिया में दूसरी क़ौम कौन सी हो सकती है! जिसके सिफ़ात अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० की सिफ़ात के बराबर हो। इसी वजह से मुफ़स्सिर नेशापूरी ने लिखा है “शायद आयत में क़ौम से मुराद क़ौमे महेदी है।”

मुफ़स्सिर मौसूफ़ ने क़ौमे महेदी की सराहत तो की है, मगर यक़ीन और क़तईयत के साथ नहीं की है। हालाँकि आयत “फ़सौफ़ याती अल्लाहु बिक़ौमिन” का सियाक़ (संदर्भ) तौरेत की आयत से मिलता-जुलता है और क़ौम की सिफ़ात अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० की सिफ़ात से मसावी ज़ाहिर हो रहे हैं, तो फिर कोई-शुब्हा की बात नहीं हो सकती कि, लफ़्ज़ अल्लाह से मुराद इमाम महेदी अले० हों और क़ौम से मुराद क़ौमे महेदी हो। ख़ासकर इस वजह से कि आप इस से पहले की बहसों में मामूर मिनल्लाह या ख़लीफ़तुल्लाह, वारिसे नबी, दाफ़े हलाकते उम्मत, ख़ातिमुल औलिया या ख़ातिमे विलायते मुहम्मदिया वगैरा साबित हो चुके हैं।

चूंकि आयत ज़ेरे बहस के अल्फ़ाज़ यह है “जब लोग अपने दीन से फिर जायेंगे, तो अल्लाह तआला एक क़ौम को लायेगा या एक क़ौम के साथ आयेगा।” इसलिये बा’ज़ मुफ़स्सिरीन क़ौम से मुराद हज़रत अबूबक्र सिद्दीक रज़ी० और आपके साथी लेते हैं। क्योंकि आपके ज़मान-ए-ख़िलाफ़त में सात जमाअतें मुर्तद हो चुकी थीं। जिनके साथ आपने जहाद फ़र्माया। यह तफ़्सीर ज़ाहिर है कि, आयत के मुताबिक़ नहीं है। क्योंकि

“फ़-सौफ़ याती अल्लाहु” से साबित है कि, यह वाकिआ ज़माना मुस्तक़बिले बईद में दरपेश (उपस्थित) होगा और हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ी० अपनी जमाअत के साथ-जो सबके सब अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० हैं, अवाईले इस्लाम में मौजूद थे। अवाइले (प्रारंभ) इस्लाम को मुस्तक़बिले बईद नहीं कहा जा सकता। फिर अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० की सिफ़ात और क़ौम की सिफ़ात मानन् (अर्थगत) एक हो तो लफ़्ज़न् (शब्दतः) जुदागाना है। अस्हाबे रसूलुल्लाह सल्ला० ग़ज़्व-ए-बदर, उहद और फ़त्ह मक्का के मौकों पर जहाद कर चुके हैं और क़ौम का जहाद आइंदा ज़माने में होने वाला साबित होता है। बहरहाल इस आयत में क़ौम से मुराद हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ी० और आपकी जमाअत क़तअन् (कदापि) नहीं हो सकती। इसके बरअक्स बा’ज़ मुफ़स्सिरीन ने क़ौम से मुराद सलमान फ़ारसी रज़ी० की जमाअत साबित की है। हालाँकि ख़ुद सलमान फ़ारसी रज़ी० ना मामूर मिनल्लाह है और ना उनकी जमाअत, और मामूर मिनल्लाह या ख़लीफ़तुल्लाह के बमुक़ाबिल (तुल्य) ग़ैर मामूर मिनल्लाह को तरजीह (प्रधानता) नहीं हो सकती। इसलिये आयत ज़ेरे बहस में कतई तौर पर लफ़्ज़ अल्लाह से इमाम महेदी अले० का ज़ुहूर हो सकता है और क़ौम से मुराद इमाम महेदी अले० की क़ौम ही हो सकती है।

अब रही यह बहस-कि मुर्तदीन कौन हैं?-जिनके इर्तदाद के बाद अल्लाह तआला क़ौमे महेदी अले० को लायेगा या क़ौमे महेदी के साथ आयेगा। रसूलुल्लाह सल्ला० ने इमाम महेदी अले० की अलामात तफ़सीली तौर पर इर्शाद फ़र्माई हैं। जिन में से हदीसे सोबान रज़ी० के अल्फ़ाज़ यह है :

अनुवाद : सोबान रज़ी० कहते हैं कि, रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया कि तुम्हारे ख़ज़ाने (ख़िलाफ़त) के लिये तीन आदमी झगड़ा करेंगे। वह सब ख़लीफ़ा के बेटे होंगे। लेकिन एक भी उस पर क़ाबिज़ न होगा। फिर मश्रिक़ की तरफ़ से सियाह झंडे निकलेंगे। वह तुमको ऐसा क़त्ल करेंगे कि अब तक किसी क़ौम ने ऐसा क़त्ल न किया होगा। उसके बाद ख़लीफ़तुल्लाह महेदी आयेंगे। जब तुम महेदी को सुन पाओ तो उनके पास पहुंचो और उनसे बैअत करो, अगरचे बर्फ़ पर से रेंगते जाना पड़े। क्योंकि वह अल्लाह के ख़लीफ़ा महेदी है। इस हदीस में हस्बे ज़ेल उमूर मज़्कूर हैं।

(१) ख़लीफ़ा के तीन बेटौं का ख़िलाफ़त के लिये झगड़ा करना, मगर ख़िलाफ़त किसी को न मिलना।
(२) मश्रिक़ की तरफ़ से सियाह झंडौं का नमूदार होना।
(३) मुसलमानौं का ऐसा क़त्ल कि कभी भी ऐसा न हुवा हो।
(४) इन वाक़ेआत के बाद ख़लीफ़तुल्लाह महेदी का ज़ुहूर।
(५) ख़लीफ़तुउल्लाह महेदी के ज़ुहूर के बाद आप के पास जाने और बैअत करने का हुक्म-अगरचे बर्फ़ पर से रेंगते जा कर बैअत करना पड़े।

ख़लीफ़ा के तीन बेटौं से मुराद-हज़रत अली अल मुर्तज़ा कर्रमुल्लाहु वज्हहु के तीन बेटे-हज़रत हसन, हज़रत हुसैन और मुहम्मद बिन हनीफ़ा रजी० हैं। जो ख़िलाफ़त से महरूम रहे।

इस हदीस में "कंज़" का लफ़्ज़ आया है, जिसके लग़वी माने ख़ज़ाना या मख़ज़न के है। लेकिन लफ़्ज़ "ख़लीफ़ा" और ज़ाहिर किये गये वाक़ेआत के क़रायन से "ख़िलाफ़त" का मफ़्हूम ज़ाहिर होता है।

क्योंकि ख़लीफ़ा के तीन बेटौं का ख़ज़ाना या माल और दौलत के लिये झगड़ा करना क़रीने क़ियास नहीं, बल्कि अपने बाप के जानशीन होने या ख़िलाफ़त के लिये झगड़ा करने का मफ़्हूम सहीह और क़ाबिले तस्लीम हो सकता है।

“इंद कंज़ुकुम” में “इंद” का लफ़्ज़ अगरचे क़ुर्ब (निकटत) के माने देता है, लेकिन यहाँ वक़्त के माने में इस्तेमाल हुवा है। जैसा कि “जेअतु इंद तुलूइश्शम्स” मुहावरा आता है। यानि मैं तुलू-ए-आफ़ताब के वक़्त आया। इसलिये “यक़्ततलु इंद कंज़िकुम” के माने यह होंगे “हुसूले ख़िलाफ़त की कोशिश के वक़्त तीन आदमी झग़ड़ा करेंगे।”

मश्रिक़ की तरह से सियाह झंडे निकलने से मुराद अबू मुस्लिम ख़ुरासानी का ख़ुरुज (निकलना) है, जो काले झंडे लेकर निकला और ख़िलाफ़ते अब्बासिया की बुनियाद डाली।

फिर “सियाह झंडे निकलेंगे” से ख़िलाफ़ते अब्बासिया के क़ियाम की तरफ़ इशारा किया गया है। जिसकी इब्तदा अबू अब्दुल्लाह सफ़्फ़ाह से और इन्तेहा ख़लीफ़ा मुस्तासम पर हुवी।

“वह तुमको क़त्ल करेंगे” में ज़मीर मफ़ऊली “तुम” के मुख़ातब मुसलमान हैं। क्योंकि यहाँ ग़ैर मुस्लिम से ख़िताब का कोई महेल या मौक़ा नहीं है और “वह क़त्ल करेंगे” की ज़मीर जमा ग़ायब बतौर माअहूद ज़हनी कुफ़्फ़ार की तरफ़ लौटती है और कलिमा “फ़ा” ताअक़ीब मअल वस्ल के लिये इस्तेमाल होता है। जैसा कि “उसूलुश्शासी” में लिखा है कि “फ़ा” कलिमा ताअक़ीब (बाद में) के वास्ते आता है (यानि माअतूफ़ अलैहि का वुजूद मुक़द्दम और माअतूफ़ का मुअख़्ख़र होता है) मगर यह ताअक़ीब मअल वस्ल होती है (यानि माबैन माअतूफ़ अलैहि और

माअतूफ़ के मुहलत नहीं) इसी बजह से “फ़ा” कलिमा का इस्तेमाल जज़ा में आता है।

किताबे मज़कूर के हाशिये पर उसकी मिसाल यह दी गई है, “अगर किसी ने अपनी ज़ौजा से कहा कि, “अगर तू घर में दाख़िल हुवी तो मुतल्लक़ा है” उस सूरत में औरत घर में दाख़िल होते ही फ़ौरन् मुतल्लक़ा हो जायेगी।

तारीख़े इस्लाम से ज़ाहिर है कि, ख़िलाफ़ते अब्बासिया की इन्तेहा या ख़ातमा के वक़्त जिसकी इब्तेदा का इशारा सियाह झंड़ियों के निकलने से हदीस में ज़ाहिर किया गया है और जिसकी इब्तदा सफ़्फ़ाह की ख़िलाफ़त से हूई थी, मुसलमानौं के क़त्ले आम का वाक़ेआ मुस्तासम ख़लीफ़ा बग़दाद की गिरफ़्तारी के फ़ौरन् बाद ज़ुहूर में आया। गोया क़त्ले मज़्कूर ताअक़ीब मअल वस्ल पर दलालत करता है।

तारीख़े वस्साफ़ में लिखा है कि चालीस दिन तक हलाकू का लश्कर क़त्ल और ग़ारत में मश्ग़ूल रहा, सोलह लाख जानें नष्ट हुईं, वहशी मुग़लौं ने दूध पीते बच्चों को तक ना छोड़ा। गलियौं में खून की नालियाँ बह रही थीं और दरया-ए-दज्ला का पानी मीलौं तक अरग़वानी (लाल) हो गया था। हदीसे सोबान रज़ी० के अल्फ़ाज़ “वह (कुफ़्फ़ार) तुम (मुसलमानौं) को ऐसा क़त्ल करेंगे कि किसी क़ौम ने इस तरह क़त्ल न किया होगा” इस घटना की तरफ़ इशारा कर रहे हैं, जो ख़िलाफ़ते बग़दाद के ख़ातमे का वाक़ेआ है।

हदीसे सोबान रज़ी० से ज़ाहिर है कि, उन वाक़ेआत के बाद ख़लीफ़तुल्लाह महेदी का ज़ुहूर होगा। जिसमें आप से बैअत की सख़्त

ताकीद की गई है। यानि अगर बर्फ़ पर से भी रेंगते जाना पड़े तो जाओ और बैअत करो।

हदीसे सोबान रज़ी० में कुफ़्फ़ार से मुराद हलाकू और उसकी फ़ौज है। चुनांचे इसकी तौसीक़ (संपुष्टि) हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहु के इस शेर से होती है।

بنّی اذا ما جاشت الترک فانتظر

ولاية مهدي يقوم فيعدل

(ऐ मेरे बच्चो! जब तुर्क हमले के लिये जोश में आ जायें तो महेदी का इंतिज़ार करो। वह अदल क़ायम करेंगे।

و ذل ملوك الارض من آل هاشم

وبويع منهم من يلذو يهزل

(उस वक़्त अले हाशिम के (ज़ालिम) बादशाह ज़लील हो जायेंगे और उनमें से ऐसे शख़्स से बैअत की जायेगी, जो लज़्ज़त और हज़्ल (अश्लीलता) में मुब्तला होगा।

"किताबुल फ़ितन्" मुअल्लफ़ा नईम बिन हम्माद में अम्मार बिन यासिर रज़ी० का जो क़ौल नक़ल किया गया हैं, वह यहाँ बयान किया जाता है, जिस से हज़रत अली रज़ी० की पेशीन गोई और हदीसे सोबान रज़ी० हर दो की तौसीक़ (संपुष्टि) होती है।

"अम्मार बिन यासिर कहते हैं कि, महेदी की अलामत यानि आप का ज़ुहूर उस वक़्त होगा जबकि तुम (मुसलमानौं) पर तुर्कौं का हमला हो और तुम्हारा ख़लीफ़ा-जो माल जमा करेगा, मर जायेगा। और उसके बाद

एक कमज़ोर शख़्स ख़लीफ़ा बनाया जायेगा-जो दो साल बाद माज़ूल (पदच्युत) हो जायेगा।”

इस क़ौल से ज़ाहिर है कि, तुर्कों से मुराद हलाकू की सेना है-जो बग़दाद पर हम्लाआवर हुइ और मुस्तासम को हलाकू ने क़त्ल करके ख़िलाफ़त का ख़ातमा कर दिया। उस ख़लीफ़ा को माल जमा करने वाला ख़लीफ़ा इसलिये कहा गया कि, उसने मुस्तंसिर के तीन ख़ाली हो गए हौज़ों को अशरफ़ियौं से भर लिया था और यह सारा माल हलाकू के हाथ लगा।

इस पूरी तक़रीर से ज़ाहिर है कि, इमाम महेदी का ज़ुहूर ज़वाले बग़दाद के बाद होगा। चुनांचे इब्ने कसीर के एक क़ौल से-जिसको नईम बिन हम्माद ने “किताबुल फ़ितन” में हदीसे सोबान रज़ी० के ज़िम्न (विषय) में लिखा है, इसी बात की ताईद होती है।

“हाफ़िज़ इमादुद्दीन इब्ने कसीर कहते हैं कि, इस सियाक़ (संदर्भ) यानि “वलौ हब्वन् अलस्-सल्ज” में मलिक बनी अब्बास की तरफ़ इशारा है और इसमें यह दलालत (तर्क) है कि, महेदी दौलते (सत्ता) बनी अब्बास के बाद आयेंगे।”

जब यह साबित हो गया कि, इमाम महेदी अले० का ज़ुहूर बनी अब्बास की ख़िलाफ़त की समाप्ति या ज़वाले बग़दाद के बाद होगा, तो अब ग़ौर तलब अम्र (विचारणीय विषय) यह है कि आयत

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ فَسَوْفَ يَاْتِي اللّٰهُ بِقَوْمٍ

यानि (ऐ ईमान वालो! जब लोग अपने दीन से पलट जायेंगे, अल्लाह तआला एक क़ौम को लायेगा या क़ौम के साथ आयेगा) में मुर्तदीन (विधर्मी) से मुराद कौन लोग हैं, जिनके इर्तदाद के बाद क़ौमे

महेदी आयेगी। हदीसे सोबान रज़ी. और इस आयत को मुताबिक़ (अनुरूप) करके देखा जाये तो मालूम होता है कि मुर्तदीन से मुराद हसन सब्बाह की जमाअत है-जो ईरान में क़िलआ अलमूत पर क़ाबिज़ थी।

हलाकू की सेना ने बग़दाद पर आक्रमण से दो साल पहले हसन सब्बाह के राज्य पर हमला करके उसे नष्ट कर दिया। हसन सब्बाह और उसकी जमाअत के इर्तदाद की कैफ़ियत हस्बे ज़ेल है। (माखूज़ अज़् किताब "निज़ामुल मुल्क तूसी")।

हसन सब्बाह हुमेरी की नसल से है। इसी वजह से उसको हसन सब्बाह कहते हैं। उसका जन्म मक़ाम "क़ुम" में हुआ और यह शख़्स ख़ाजा हसन निज़ामुल मुल्क और उमर ख़य्याम का मआसिर (समकालीन) है। यह तीनों मद्रस-ए-बग़दादिया निज़ामिया में एक ही ज़माने के तालिबे इल्म थे। ख़ाजा निज़ामुल मुल्क तो तालीम से फ़ारिग़ हो कर अलप अर्सलान का और बाद में मलिक शाह सलजोक़ी का प्रधान मंत्री बन गया। उमर ख़य्याम को एक जागीर दे कर मआश से मुतमईन कर दिया। लेकिन हसन सब्बाह अपनी ग़ैर मामूली दानिशमन्दी (चतुरता) और ख़ुदादाद ज़हानत से अपने ही बल पर खड़ा रहा। हसन सब्बाह यह चाहता था कि, ख़ाजा निज़ामुल मुल्क की जगह ख़ुद प्रधान मंत्री बन जाये। इसलिये उसने ख़ाजा की एक हिसाबी ग़लती बताइ और सल्तनत के जमा और ख़र्च बनाने के सिलसिले में मालिक शाह सलजोक़ी को ख़ाजा से बर्हम (नाराज़) करा दिया। लेकिन ख़ुद हसन सब्बाह को ख़जालत (शर्मिन्दगी) उठानी पड़ी और वह असफ़हान चला गया। फिर मिसर पहुंच कर मज़्हबे इस्माईलिया का मुबल्लिग़ बन गया। ख़लीफ़ा

मुस्तन्सर बिल्लाह फ़ातिमी ने उसकी बड़ी ख़ातिर मदारात (आवभगत) की।

उस ख़लीफ़ा ने बा'ज़ वुजूह (कारण) से अपने बेटे नज़्ज़ार को वली अहदी से ख़ारिज करके दूसरे बेटे अहमद अलमुस्ताली को वली अहद (युवराज) बना दिया। हसन नज़्ज़ार का तरफ़दार था। जब अमीरुल जुयूश (सेनापति) को मालूम हुवा कि, हसन नज़्ज़ार की ख़ुफ़िया दावत कर रहा है, तो उसने मुस्तन्सर के हुक्म से हसन को क़िला दम्यात में क़ैद कर दिया। इत्तेफ़ाक़ से क़िले का बुर्ज गिर पड़ा। लोगौं ने उसको हसन की करामत समझा और चंद ईसाइयौं के साथ एक जहाज़ में बिठाकर रवाना कर दिया। समन्दर में तूफ़ान आने से तमाम जहाज़ के मुसाफ़िर बदहवास हो गये, लेकिन, हसन निहायत इत्मीनान से बैठा रहा। एक मुसाफ़िर ने पूछा, "आप किस लिये इत्मीनान से बैठे हो?" हसन ने जवाब दिया, "मुझे इमामे बर्हक़ ने इत्तेला दी है कि, जहाज़ नहीं डूबेगा। थोड़ी देर बाद तूफान जाता रहा। लोग हसन के क़दम चूमे। उसको एक वली तस्लीम किया गया। जब जहाज़ शाम पहुंच गया तो हसन जहाज़ से उत्रा और ख़ुश्की के रास्ते से दयारे बकर, जज़ीरा रोम, हलब, बग़दाद, ख़ुझिस्तान होता हुवा असफ़हान आ गया। इन तमाम शहरौं में वह मज़्हबे इस्माईलिया की दावत करता रहा। जब हसन के मुरीदौं की तेदाद ज़्यादा हो गई, तो क़िला अलमूत के क़रीब जाकर ठहरा। यह लफ़्ज़ असल में आल-ए-आमूत है। जिसके माने दैलुमी ज़बान में आशियान-ए-उक़्क़ाब के हैं। महेदी अलवी ने उस क़िले को हसन के हाथ बेच दिया था। वह यहाँ बैठकर आराम के साथ अपने मज़्हब की इशाअत करता रहा और अपना शाहाना जाह व जलाल क़ायम किया। अगरचे मलिक शाह सलजोक़ी ने हसन पर चढ़ाइ की और क़रीब था कि हसन को शिकिस्त हो जाये। मगर

उसने एक फ़िदाइ के ज़रीए ख़ाजा निज़ामुल मुल्क को क़त्ल करा दिया। इतने में मलिक शाह का भी इन्तेक़ाल हो गया, इस तरह क़िला अलमूत की तसख़ीर (अधिग्रहण) मुल्तवी रह गई और हसन का इक़्तेदार बढ़ गया।

मारको पोलू की रिवायत से साबित होता है कि, क़िलअतुल मौत दो पहाडौं के दरमियान वाक़े था। इसलिये वह मक़ाम बलदुल जबल और यहाँ का हाकिम शेख़ुल जबल कहलाता था, जिसका नाम अलाउद्दीन था। उसी का क़ौल था कि, “मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० ने एक बेहिश्त (स्वर्ग) देने का वादा किया था, जो मुझे मिल गई है।” उसने दो घाटियों के बीच में एक ख़ूबसूरत बाग़ बनवाया था, जिसमें मुख़्तलिफ़ क़िसम के मेवेदार दरख़्त और फूलौं के दरख़्त मौजूद थे। उस में हर वक़्त खूबसूरत औरतें मौजूद रहती थी, जो हर किसम के बाजे बजाकर नाचती-गाती थी। उस बाग़ में वह लोग आते थे, जो हशीश (भंग) पीने पर राजी होते थे। बाग़ में जाने का सिर्फ़ एक ही रास्ता था। जिन लोगौं को बेहिश्त देखने का शौक़ होता, उन्हें भंग पिलाकर मदहोश करने के बाद बाग़ में पहुंचा दिया जाता था। जब उन्हें बाग़ और नाज़नीन औरतौं को देखकर बेहिश्त का यकीन हो जाता, तो दुबारा उन्हें मदहोश करके बाहर निकाल दिया जाता था।

मारको पोलू चूंकि अलाउद्दीन के ज़माने में यहाँ आया था। इसलिये वह इस बेहिश्त को अलाउद्दीन से मन्सूब करता है। लेकिन दर हक़ीक़त उस बेहिश्त का बानी हसन सब्बाह है। जो लोग जन्नत देखकर आ जाते थे, उनको ख़ुदाई का लक़ब दिया जाता था। उनको यकीन था कि मरने के बाद उसी जन्नत में जगह मिल जायगी। इसलिये वह ऐसे निडर

होते थे कि, लड़ने-मरने से नहीं डरते थे। बादशाहौं और उमरा वग़ैरह को दरबार में जा कर क़त्ल करना उनका मामूली काम था। चुनांचे उस फ़िरक़े ने कई नामी गिरामी लोगौं को क़त्ल कर दिया है (उनमें से 48 मारे जाने वाले लोगौं की फ़ेहरिस्त किताब "निज़ामुल मुल्क तूसी" में मौजूद है) अक़ायद का प्रचार ऐसी जमाअत के ज़रीए होता था-जिसका हर फ़र्द दाई कहलाता था।

हसन सब्बाह ने फ़ल्सफ़ियाना तरीक़े से मज़्हबे इस्माईलिया में बहुत से नये मसाइल का इज़ाफ़ा किया। मसअला वुजूदे बारी में इतनी शिद्दत की कि नऊज़ु बिल्लाह ख़ुदा को बेकार और मुअत्तल साबित कर दिया। मसलन् ख़ुदा को क़ादिर कहते हैं, तो इसलिये नही कि ख़ुद उसमें क़ुदरत है। बल्कि, इस लिहाज़ से कि उसने दूसरौं को क़ुदरत दी है। उसके जुम्ला सिफ़ात की यही हालत है। क्योंकि, अगर ख़ुदा में सिफ़ात हो तो वह मख़लुक के साथ मुशाबा (समान) हो जायेगा। यह ऐसा मसअला है कि, जिसकी वजह से ख़ुदा की ज़ात में शुब्हा (शक) पैदा कर दिया गया और उनका सब से महत्वपूर्ण यह मसअला है कि, हर हुक्मे ज़ाहिर का एक बातिन होता है। हर तन्ज़ील की एक तावील है। इस मसअले की वजह से उनकी नज़र में तमाम क़ुरआन और अहादीस के अहकाम दर्हम-बर्हम हो गये। इसी मसअले से उस फ़िरक़े का नाम फ़िरक़-ऐ-बातिनिया पड़ गया। अहकामे शरई में जो तावीलात की गई है, उनकी

मुख़्तसर फ़ेहरिस्त बतौरे नमूना दर्जे ज़ेल है।

1. नमाज़ : इमाम को याद करना।

2. नमाज बा जमाअत : इमामे मासूम की मुताबिअत (अनुकरण)।

3. रोज़ा : इमाम के असरार (भेद) की हिफ़ाज़त और एक दूसरे फ़क़ीह का क़ौल है कि, अपने मुक़्तदा (मुरशिद) के अफ़्आल को ख़ामोशी से देखना। अगर फ़वाहिश (अश्लील कामौं) में मुब्तला हो तो उसको भी अफ़्आले हसना (अच्छे काम) समझना।

4. जकात : तज़्किया नफ़्स, माल का पाँचवा हिस्सा इमामे मासूम की नज़र करना।

5. हज : इमाम की ज़ियारत करना और दूसरा फ़क़ीह कहता है कि नौ रोज़ और महरजान के दिन ख़ुदा की तरफ़ रुजूअ होना।

6. तवाफ़े काअबा : इमाम के घर का तवाफ़ करना।

7. ग़ुस्ल : तज्दीदे अहद व पैमाँ।

8. वुज़ू : इमाम से मज़्हबी तालीम हासिल करना।

8. तयम्मुम : इमाम की ग़ैर हाजरी में नक़ीब से तालीम हासिल करना।

9. अज़ाँ और तकबीर : इमाम की इताअत पर लोगौं को आमादा करना।

11. जन्नत : ऐश पसन्दी, जिस्मौं का तकलीफ़ से छूट जाना।

12. दोज़ख़ : मेहनत, जिस्मौं का तकलीफ़ में मुब्तला होना।

13. ज़िना : दीन के असरार ज़ाहिर करना।

14. एहतेलाम : मज़्हबी राज़ का ज़ाहिर होना।

15. काअबा : पैग़म्बर

16 सफ़ा : नबी

17. मर्वा : वसी

18. बाबे अली, हदीसे नबवी "मैं इल्म का शहेर हूँ। अली उसका दरवाज़ा है" से माखूज़।

19. इल्मे ज़ाहिर : आलमे अजसामे सिफ़ली व अलवी।

20. इल्मे बातिन : आलमे अरवाह, नुफ़ूसे उक़ूल।

इसी तरह हज़ारों मसाइल हैं, जिनमें हर ज़ाहिर की बातिनी तावील की गई है। मसलन्, हज़रत ईसा अले० की निस्बत कहते हैं कि वह मुरदौं को ज़िन्दा करते थे। यह फ़िरक़ा हज़रत ईसा अले० को यूसुफ़ नज्जार का बेटा कहता था। यह लोग क़ियामत और हशर और नशर के क़ायल नहीं थे। मसअले तनासुख़ (आवा गमन) को सहीह मानते थे।

यह फ़िरक़ा हस्बे ज़ेल किलौं पर क़ाबिज़ था। क़िला अलमूत, गर्दे कोह, लासर, शाहवज़, वस्मकोह, ख़ालंजान, क़िला उस्तून आवंद, आरधन, अन्नाज़र, तम्बूर, ख़ल्लाद ख़ाँ वग़ैरह।

हसन सब्बाह ने 518 हिज्री में इन्तेक़ाल किया। जिसके जानशीन एक के बाद एक सात हैं : (1) किया बुज़ुर्ग (2) मुहम्मद बिन किया (3) हसन बिन मुहम्मद (4) मुहम्मद सानी बिन हसन (5) जलालुद्दीन मुहम्मद सानी मुलक़्क़ब ब हसन सालिस (6) अलाउद्दीन मुहम्मद बिन जलालुद्दीन मुहम्मद सालिस (7) रुकनुदीन ख़ोरशाह बिन अलाउद्दीन।

654 हिज्री/1256 ईसवी में हलाकू ख़ाँ ने क़िला अलमूत पर हमला करके उन बातिनियौं का ख़ातमा कर दिया। बारा हज़ार बातिनी क़त्ल किये गये और मिसर में भी मलिकुज़् ज़ाहिर बब्रस और सुलतान सलाहुद्दीन अय्यूबी ने उन बातिनियौं का समूल विनाश कर दिया।

उस फ़िरक़े को उसके अक़ायदे बातिला की वजह से-जैसा कि बयान कर दिया गया है, नीज़ ज़ालिमाना क़त्ल और ख़ूंरेज़ी के सबब से हस्बे फ़र्माने बारी तआला “जो शख़्स मुसलमान को क़सदन् मार डालेगा। उसकी सजा दोज़ख़ है। जिसमें वह हमेशा जलता रहेगा।” (अन् निसा : 93) मुर्तद या काफ़िर कहें तो ना मुनासिब नहीं है। अहकामे फ़िक़ही के लिहाज़ से भी उन लोगौं पर इर्तदाद की तारीफ़ पूरी-पूरी सादिक़ आती है और अहकामे फ़िक़ही के नज़र करते दीनी मसाइल में तावीलाते बातिल किये जायें तो कौन शक कर सकता है कि हसन सब्बाह और उसके जानशीन-जो सबाह के बातिल अक़ायद के मान्ने वाले थे, और वह तमाम लोग-जो दाई और फ़िदाइ के नाम से मौसूम थे और उन ही अक़ायदा के पैरो थे, मुर्तद नहीं थे। मुअर्रिख़ीने फ़ारस ने इस फ़िरक़े को उसके अक़ायदे बातिला और ज़ालिमाना क़त्ल और ख़ूंरेज़ी के कारण मलाहेदा (धर्म भ्रष्ट) के नाम से याद किया है।

हदीसे सोबान रज़ी० में इमाम महेदी अले० के ज़ुहूर (प्रकट होने) का ज़माना बग़दाद का शासन समाप्त होने क बाद बताया गया है और आयत “फ़-सौफ़ याती अल्लाहु बिक़ौमिन्” में जिसमें शब्द “अल्लाह” से मुराद महेदी अले० का ज़ुहूर है। बेसते महेदी अले० का ज़माना मुर्तदीन के इर्तदाद के बाद बयान किया गया है।

इस आयत में शब्द “सौफ़” जो फ़ेले मुज़ारे (अनिश्चित कालिक क्रिया) “याती” के पहले आया है, तो उस से इमाम महेदी के ज़ुहूर का ज़माना इर्तदाद (धर्म-परिवर्तन) के बाद बयान किया गया है। ज़मान-ए-मुस्तक़बिले बईद (दूर का भविष्यकाल) में ज़ाहिर होता है और हदीसे सोबान रज़ी० में “सुम्म” का शब्द “यजी ख़लीफ़तुल्लाह अलमहेदी” से

पहले आया है, वह ताअक़ीब और तराख़ी (देर) पर दलालत करता है और यह ताख़ीर (देर) ज़मान-ए-मुस्तक़बिले बईद के मुताबिक़ होना चाहिये। क्योंकि रसूलुल्लाह सल्ला०-जो ज़माना भी बताएंगे, वह क़ुरआन शरीफ़ से ग़ैर मुताबिक़ न होगा। फिर हदीसे सोबान रज़ी० में सुक़ूते बग़दाद और आयत में मुर्तदीन के इर्तदाद का ज़माना भी एक ही होगा या फ़र्क़ के साथ साबित होगा। हुस्ने इत्तिफ़ाक़ से सुक़ूते बग़दाद से पहले जो 656 हिज्री में हुआ मुर्तदीन की हुकूमत भी 654 हिज्री में ख़त्म हो गई और उन दोनों का ख़त्म करने वाला भी एक ही शख़्स-हलाकू खाँ था।

अल्लामा ज़मख़्शरी ने तफ़्सीर कश्शाफ़ में इसी के तहत अवाइले इस्लाम की जिन ग्यारह मुर्तद जमाअतौं का ज़िक्र किया है, उनमें से तीन जमाअतें रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़िन्दगी में और सात पहले ख़लीफ़ा हज़रत अबूबक्र रज़ी० की ख़िलाफ़त के ज़माने में मुर्तद हो गईं और एक जमाअत (वर्ग) दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर रज़ी० की ख़िलाफ़त के ज़माने में मुर्तद हो गईं।

ज़ेरे बहस आयत में "मुर्तद" का शब्द मुज़ारे का सीग़ा है-जो ज़मान-ए-हाल (वर्तमान काल) और मुस्तक़बिल (भविष्यकाल) पर दलालत करता है। इसलिये आयत के माने यह होंगे-"जब लोग ज़मान-ए-हाल में यानि अवाइले इस्लाम में मुर्तद हो जायें या ज़मान-ए-मुस्तक़बिल-जैसे बाबकी, क़रामिता और बर्क़ई वग़ैरह है, या जमाअत सब्बाही मुर्तद हो जाये, तो अल्लाह तआला इमाम महेदी अले० को आपकी क़ौम के साथ मबऊस फ़रमायेगा। लेकिन वह तावील-जिस से आयत और हदीस का ज़माना मुत्तहिद (सहमत) हो जाता है, ज़्यादातर सहीह और मुनासिब है। इसलिये मुर्तदीन की जमाअत सब्बाही जमाअत साबित होगी।

विलायत मआब हज़रत अली कर्रमल्लाहु वजहहु के अश्आर मोजिज़ शेआर (काव्य) से-जो इस से पहले लिखे गये हैं, साबित होता है कि इमाम महेदी अले० के इंतिज़ार का ज़माना तुरकौं के जोश में आने के बाद से है। लेकिन उन अश्आर में यह ज़ाहिर नहीं होता कि, कब तक इंतिज़ार किया जाये। उसके तस्फ़िये (निर्णय) के लिये हज़रत विलायत मआब ही का कलाम अर्श इलहाम क़ाबिले मुलाहज़ा है। जिसमें आपने नौ सो साल या नवीं सदी का इशारा फ़र्माया है।

नईम बिन हम्माद ने मुहम्मद बिन हनीफ़ा रज़ी० से रिवायत की है।

“मुहम्मद बिन हनीफ़ा रज़ी० कहते हैं कि, हम अली रज़ी० के पास थे। एक शख़्स महेदी अले० के बारे में पूछा तो फ़र्माया, बहुत दूर है। फिर आपने हाथ पर नौ का अक़्द किया और फ़र्माया वह आख़र ज़माने में निकलेंगे।”

अक़्दे अनामिल (उंगलियों का इशारा) की सूरत यह है कि, उसमें इकाइयाँ, दहाइयाँ, सैंकड़े, हज़ार ऐसे इम्तियाज़ के साथ उंगलियौं पर गिने ज़ाते हैं कि, एक का एहतिमाल (शक) दूसरे पर नहीं हो सकता। लेकिन, वह वज्हे इम्तियाज़ (फ़र्क़) जिस से हर अदद अलाहिदा-अलाहिदा समझा जाता है। वह उक़ूद यानि इशारात है-जो सीधे और बायें हाथ की उंगलियाँ मुक़र्ररा मक़ामात पर ख़ास तरकीब और वज़ा (शैली) के रखने से हासिल होते हैं। मसलन् सीधे हाथ की उंगलियाँ ख़िंसिर (छोटी उंगली), बिंसिर (अंगूठी पहनाने की उंगली), बुस्ता (बीच की उंगली) से एक से नौ तक इकाइयाँ बनती है। सीधे हाथ की दो उंगलियाँ सब्बाबा (शहादत की उंगली) और अंगूठे से अश्रात यानि दस से नव्वद तक दहाइयाँ बरामद होती है। उसके मुक़ाबिल बायें हाथ में उन्हीं मक़ामात पर यही इशारात

बनाने से बजाये अश्रात और अहाद के एक हजार से नौ हजार और एक सौ से नौ सौ तक आदाद हासिल होते हैं। चुनांचे ग़ियासुल लुगाल में लिखा है :

> "मालूम कर लेना चाहिये कि सीधे हाथ में जो चीज़ एक से नौ तक के अक़्द पर दलालत करती है, वही बायें हाथ पर एक हज़ार से नौ हज़ार तक के अक़्द पर दलालत करती है और इसी तरह सीधे हाथ में जो चीज़ दस से नव्वद तक के अक़्द पर दलालत करती है, वही बायें हाथ में एक सौ से नौ सौ के अक़्द पर दलालत करती है।"

इस तफ़्सील से ज़ाहिर हो रहा है कि, नौ के अक़्द चार हैं। (9), (90), (900), (9,000) और यह आदाद (अंक) सीधे और बायें हाथ की उंगलियौं के मक़ामात बदलने से बदलते है।

चूंकि रिवायत में यह सराहत नहीं है कि, हज़रत अली मर्तुज़ा कर्रमुल्लाहु वज्हहु ने जिस अक़्दे अनामिल का इशारा फ़र्माया था, वह सीधे या बायें हाथ की कौन सी उंगलियौं से ज़ाहिर किया था। उस रिवायत में यह इब्हाम (अस्पष्टता) है कि, इमाम अले० के ज़ुहूर का नौ या नव्वद साल में इशारा किया गया है या नौ सौ या नौ हजार साल में? पस, यहाँ दिरायत (बुद्धि) से काम लेने की ज़रूरत है कि इन चार एहतेमालात (संदेह) में कौन सी सूरत क़रीने क़ियास हो सकती है। पहली दो सूरतें मुराद लेना इसलिये सहीह नहीं है कि, ख़ुद रिवायत में "हैहात" यानि बाद (दूर है) के अल्फ़ाज़ मौजूद हैं और नौ या नव्वद साल इतनी क़रीब मुद्दतें हैं कि, उन पर "हैहात" का लफ़्ज़ सादिक़ नहीं आता। उसके अलावा रिवायत में "यख़्रुजु फ़ी आख़िरिज़् ज़माँ" के अल्फ़ाज़ भी हैं। यानि इमाम

अले० का ज़ुहूर आख़र ज़माने में होने की सराहत मौजूद है। इस से साफ़ ज़ाहिर है कि, नौ साल या नव्वद साल की क़लील (थोड़ी) मुद्दत पर आख़र ज़माने का इत्लाक़ (विषेश अर्थ में इस्तेमाल) किसी तरह दुरुस्त नहीं। लिहाजा वह मुद्दत बीत गई और उस मुद्दत में इमाम अले० का ज़ुहूर भी नहीं हुआ। इसलिये निश्चित रूप से मालूम हो गया कि, हज़रत अमीरुल मोमिनीन रज़ी० ने जो इशारा किया था, वह नौ और नव्वद का अक़्द नहीं था। अब रहे नौ सौ और नौ हज़ार के एहतिमालात। उनमें से नौ हज़ार के अदद का एहतिमाल निश्चित रूप से साक़ित (समाप्त) है। क्योंकि के ख़बर के वक़्त के बाद से नौ हज़ार साल मुराद हों या सन् नौ हज़ार हिज्री, यह दोनों एहतिमाल भी सहीह नहीं हो सकते। क्योंकि अहादीस में दुनिया की मुद्दत सात हज़ार साल बताई गई है। इसलिये वह अक़्दे अनामिल नौ हज़ार का नहीं हो सकता। अब सिर्फ़ नौ सौ का अक़्द बाक़ी रह गया। इसलिये नौ सौ पर ज़ुहूरे महेदी का यक़ीन हो सकता है और यह बात भी इमामुना अले० पर बिल्कुलिया सादिक़ आती है। क्योंकि आप 847 हिज्री में पैदा हूए, चालीस साल उम्र, 887 हिज्री में तब्लीग़े महेदियत का काम शुरू फ़र्माया और महेदियत का पहला दाअव-ए-मुअक्कद मक्का मुअज़्ज़मा में 901 हिज्री में फ़र्माया। दूसरा दाअवा 903 हिज्री में बमुक़ाम मस्जिद ताज खाँ सालार और तीसरा दाअवा 905 हिज्री में बमुक़ाम बड़ली फ़र्माया और 910 हिज्री में आपका विसाल मुबारक हुआ।

इब्ने ख़ल्दून ने अपने मुक़द्दमे में लिखा है कि, शेख़ अकबर मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी ने तहरीर फ़र्माया है कि, “महेदी अले० (ख़ फ़ जीम) हिज्री के बाद आयेंगे। इन हुरूफ़ कें आदाद (अंक) 683 होते हैं। अगर इन हुरूफ़ (अक्षर) को मल्फ़ूज़ी करें तो हिय-अलख़ा-अलफ़ा-

अलजीम=15+632+112+84=843 होते हैं। यह आदाद भी नवीं सदी को ज़ाहिर करते हैं और यह सदी (शताब्दी) (683) के बाद आती है और यह पेशीन गोई भी हज़रत विलायत मआब अली रज़ी० की पेशीन गोई के मुताबिक़ है।

जो लोग महेदी अले० के ज़ुहूर को नुज़ूले ईसा अले० के ज़माने पर मुन्हसिर (आधारित) रखते हैं, बिलकुल ग़लत है। दर असल यह अकीदा अहले तश्ई का है, जो अहले सुन्नत में राइज हो गया। उसका बयान इस तरह है...

तारीख़े इस्लाम मुअल्लफ़ा अमीर अली में लिखा है कि, जब इमाम हसन अल-अस्करी 260 हिज्री में वफ़ात पा चुके, तो इमामत का बार उनके पुत्र मुहम्मद अलमारूफ़ महेदी के सर पर आ पड़ा। जो बारहवें इमाम थे। पाँच साल की उम्र थी कि बाप की जुदाइ से घबराकर उनकी तलाश में कोहे सत्रमन राइ के एक ग़ार में दाख़िल हूए। यह बच्चा उस ग़ार में दाख़िल हो कर वापस नहीं आया। शेआ लोग एक अर्से तक हर रोज़ शाम के वक़्त ग़ार के मुंह पर जमा होते और उस बच्चे से वापस आने की विनती करते। फिर देर तक इंतिज़ार के बाद दिल शिकस्ता और मायूस अपने घरों को लोट ज़ाते। जब उन लोगौं से कहा जाता कि, उस बच्चे का इतने अर्से तक ज़िन्दा रहना मुम्किन नहीं। तो वह जवाब देते थे कि, हज़रत ख़िज़र जब एक अर्से से अब तक ज़िन्दा हैं, तो फिर उनके इमाम के ज़िन्दा ना होने की माक़ूल (उचित) वजह क्या हो सकती है!

उस बच्चे को अहले तश्ई इमाम महेदी या इमामे ग़ाइब या इमाम क़ायम कहते हैं और उनका एतिकाद है कि, यही बच्चा नुज़ूले ईसा अले०

से पहले इस ग़ार से निकलेगा और दुनिया के लोगौं को माअसियत (गुनाह) और अत्याचार से नजात दिलायेगा।

मुतक़द्दिमीन (पूर्वज) अहले सुन्नत फ़िरक़-ए-इमामिया की तरह इमामे क़ायम या इमामे ग़ाइब को इमाम महेदी नहीं कहते। बल्कि उनके पास इमाम महेदी कोई और हैं-जो फ़ातिमा रज़ी० की संतान से होंगे और ख़ुदा उनको जब चाहेगा नुसरते दीन के लिये मब्ऊस करेगा। अल्लामा सादुद्दीन तफ़्ताज़ानी उलमा-ए-अहले सुन्नत का मज़्हब इस तरह बयान करते हैं...

"उलमा का मज़्हब यह है कि, महेदी इमामे आदिल औलादे फ़ातिमा रज़ी० से हैं। ख़ुदा आपको जब चाहेगा पैदा कर देगा और अपने दीन की नुसरत के लिये मब्ऊस कर देगा।"

इस क़ौल से ज़ाहिर है कि, उलमा-ए-अहले सुन्नत के पास इमाम महेदी के ज़ुहूर का ज़माना मुअय्यन (निश्चित) नहीं है। नुज़ूले ईसा अले० का ज़माना मुअय्यन होता तो इस क़ौल में सराहत कर दी जाती। नतीजा यह कि अहले सुन्नत के मुतअख़्ख़िरीन (बाद के उलमा) ने कब और क्योंकर अहले तश्ई के एतिकाद को अपने दिल में जगह दी है-मालूम नहीं होता। महेदी अले० और ईसा अले० एक ज़माने में ना आने के दलाइल और भी हैं, जो बख़ौफ़े तवालत नहीं लिखे गये। इसकी तफ़्सील हमारा "रिसाला बराहीने महेदविया" में देखी जा सकती है।

ख़ातिमा :

इस रिसाले में सिर्फ़ आठ आयतौं से बहस की गई है। जिनसे इमाम महेदी अले० की बेअ्सत का सुबूत क़तईयत के साथ मिलता है। इसके अलावा और भी ऐसी आयाते शरीफ़ा क़ुरआन शरीफ़ के मुख़्तलिफ़

मक़ामात पर आई हैं, जिनमें क़ौमे महेदी का ज़िक्र मौजूद है। इस मुख़्तसर रिसाले में हमको यह बताना मक़सूद था कि, जो लोग इस बात के क़ाइल है कि, क़ुरआन शरीफ़ में महेदी का ज़िक्र ही नहीं आया है। उनका यह ख़याल किस क़दर बजाये ख़ुद सहीह नहीं है। इस मक़्सद को साबित करने के लिये इस मुख़्तसर रिसाले में पेश की गई यह चंद आयात ही बतौर नमूना काफ़ी है। ख़ुदा का शुक्र है कि, जिसने ऐसे ज़रूरी रिसाले को लिखने की तौफ़ीक़ अता फ़र्माई।

आख़िरू दाअ्वाना अनिल हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन।

ख़ातिमा

इस रिसाले में सिर्फ़ आठ आयतों से बहस कि गई है। जिस से इमाम महेदी अलयहिस्सलाम का बेअ्सत की सुबूत क़तइय्यत के साथ मोलता है। इस के अलावा और भी ऐसी आयात शरीफ़ा क़ुरआन शरीफ़ के मुख़्तलीफ़ मक़ामात पत आई है, जिन में क़ौमे महेदी का ज़िक्र भी मौजूद है। इस मुख़्तसर रिसाले में हम को बताना मंज़ूर था कि-जो लोग इस बात के क़ाइल हैं कि, क़ुरआन शरीफ़ में महेदी अलयहिस्सलाम का ज़िक्र ही नहीं आया है, उन का ख़याल किस क़दर बजाए ख़ूद सहीह नहीं है। इस मक़्सद को साबित करने के लिए इस मुख़्तसर रिसाले में पेश कि गई ये चंद आयात ही बतौर नमूना काफ़ी व वाफ़ी हैं। ख़ुदा का शुक्र है कि, जिस ने ऐसे ज़रूरी रिसाले को लिखने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाई।

* * * * * * * * * * * * * * * * * * * *